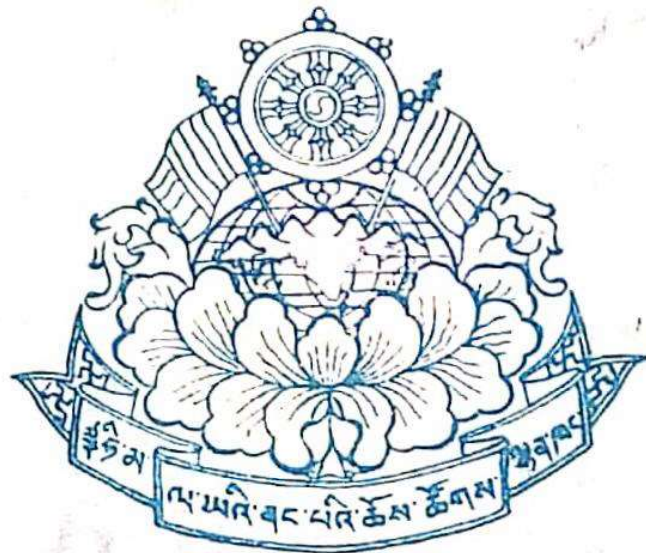
आचार्य कमलशील विरचित

भावनाक्रम, द्वितीय

भोटी-संस्करण एवं नेपाली अनुवाद



སློབ་དཔོན་ཀཱ་མ་ལ་ཤཱི་ལས་མཛད་པའི་
བསྒོམ་རིམ་བར་བ་བལ་བོད་ཤན་སྦྱར་
བཞུགས་སོ།།

༄༅། །སློབ་དཔོན་ཀ་མ་ལ་ཤཱི་ལས་མཛད་པའི་ བསྒོམ་རིམ་བར་པ་ བཞུགས་སོ།།

(ནེ་བོད་ཤན་སྦྱར།)



སྒྱུར་བ་པོ།
ཞིང་ཡ་རྡོ་རྗེ་ཤྲེ་ཥྛ།

རྩོམ་སྒྲིག་པ།
རོ་ཤན་ལཱལ་ནེ་གི་ཁུ་ནུ་པ།

ཧི་མ་ལ་ཡའི་ནང་ཆོས་དང་རིག་གཞུང་ལྷན་ཚོགས་ཁང་།

སངས་རྒྱས་འདས་ལོ ༢༥༤༠ ཕྱི་ལོ ༡༩༩༦

हिमालयी बौद्ध संस्कृति ग्रन्थमाला-2

प्रथम संस्करण : 1996, 10000 प्रतियां
मूल्य : 20 रू 0

प्रकाशक:
लामा छोसफेल ज़ोदपा
अध्यक्ष
हिमालय बौद्ध संस्कृति संरक्षण सभा
दिल्ली

Printed at the Jayyed Press, Delhi 110006

HIMALAYAN BUDDHIST CULTURAL SERIES-2

BHĀVNĀKRAMA

OF

ĀCĀRYA KAMALAŚĪLA

(Tibetan Version and Nepali Translation)

Translated

by

VIJAYARAJ VAJRACHARYA

Edited

by

ROSHAN LAL NEGI, BISHT

HIMALAYAN BUDDHIST CULTURAL ASSOCIATION
DELHI

B.E. 2540 C.E. 1996

HIMALAYAN BUDDHIST CULTURAL SERIES-2

First Edition: 10000 Copies
Price: Rs. 20

Data Set on Apple Macintosh by Khangpa Publications, Sarnath-Varanasi

Published by:
Lama Chosphel Zotpa
President
Himalayan Buddhist Cultural Association
Delhi

प्राक्कथन

एक व्यक्ति के जीवन में महायान के द्वार, चित्तोत्पाद से लेकर बुद्धत्व प्राप्ति तक के समस्त उपदेशों के अभ्यास करने की पद्धति को आचार्य कमलशील ने अपने ग्रन्थ भावनाक्रम-द्वितीय में अत्यन्त सरल एवं सुबोध रूप में निर्देश किया है।

कुछ वर्ष पूर्व हिमालय बौद्ध संस्कृति संरक्षण सभा ने इस भोट ग्रन्थ को हिन्दी अनुवाद सहित प्रकाशित किया था। उसी के आधार पर श्री रोशनलाल नेगी तथा श्री विजयराज वज्राचार्य ने हिमालय बौद्ध संस्कृति संरक्षण सभा के अनुरोध पर इसे नेपाली भाषी जन-साधारण को इसे समझने में अत्यन्त सरलता होगी। हमें इस ग्रन्थ के भोट एवं नेपाली अनुवाद साथ में प्रकाशित करते हुये अत्यन्त हर्ष का अनुभव हो रहा है।

इस पुनीत कार्य द्वारा जो भी पुण्य अर्जित हो, वे सभी परम पावन दलाई लामा जी के दीर्घायु तथा तिब्बत के स्वतन्त्रता के लिए परिकामना करते हैं। इससे सभी जगत् के प्राणियों को सर्वज्ञता प्राप्त हो ऐसी हमारी प्रार्थना है।

इस ग्रन्थ के हिन्दी तथा नेपाली भाषा के अनुवाद-कर्त्ताओं तथा इस कार्य के प्रकाशन में जिन लोगों का सहयोग प्राप्त हुआ है, उन सबके प्रति आभार व्यक्त करता हूं। पाठकों को इससे लाभ मिलेगा ऐसा मेरा विश्वास है।

देहली   *लामा छोसफेल ज़ोदपा*

१५ नवम्बर १९९६

तृतीय संस्करण की भूमिका (नेपाली)

बड़े सौभाग्य एवं हर्ष की बात है कि परम पावन दलाई लामा जी इसी वर्ष भारतीय हिमालयी क्षेत्र में दूसरी बार श्रीकालचक्र अभिषेक प्रदान कर रहे हैं। इस बार यह अभिषेक सलोगड़ा (पश्चिमी बंगाल) में आयोजित किया जा रहा है। यहां के समाज में नेपाली भाषा के अत्यन्त प्रचलन को देखते हुये इस ग्रन्थ का नेपाली भाषा में भी अनुवाद किया गया है, नेपाली अनुवाद विजयराज वज्राचार्य ने किया है, इसके लिये मैं उनका अत्यन्त आभारी हूं।

समय के अत्यन्त अभाव से यह नेपाली अनुवाद कार्य शीघ्रता में हुआ है, इस कारण त्रुटियों की अधिक सम्भावना है, परन्तु समय सीमा में बन्धे रहने की हमारी विवशताओं को ध्यान में रख कर विद्वान् पाठकगणों से क्षमा चाहते हैं। अगले संस्करणों में विशेष ध्यान देकर इन सम्भावित त्रुटियों को दूर किया जायेगा।

इस तीसरे संस्करण को हिमालय बौद्ध संस्कृति संरक्षण सभा दिल्ली द्वारा प्रकाशित किया जा रहा है, जिसके अध्यक्ष लामा छोसफेल जोदपा है, उन्ही के प्रयासों से यह संस्करण भोटी-नेपाली पाठकों को सुलभ हो सका है। एतदर्थ मैं उनका आभारी हूं।

तिब्बती संस्थान *रोशनलाल नेगी*

सारनाथ

वैशाख पूर्णिमा, ३ मई, १९९६

དཔར་སྐྲུན་པའི་ཆེད་བརྗོད།

༄༅། །འཕགས་ཡུལ་གྱི་སློབ་དཔོན་ཆེན་པོ་པད་མའི་ངང་ཚུལ་གྱིས་མཛད་པའི་སྒོམ་རིམ་བར་པ་འདི་ནི། ཐེག་པ་ཆེན་པོའི་སྤྲོ་སེམས་བསྐྱེད་ནས་མཇུག་རྣམ་མཁྱེན་རྒྱལ་བའི་གོ་འཕང་གི་བར། གང་ཟག་གཅིག་འཚང་རྒྱ་བའི་ལམ་གྱི་རིམ་པ་ཆ་ཚང་ལ། གོ་སླ་ཞིང་ཀློག་འཁྱེར་གྱི་འཇུག་པ་བདེ་བར་ཞུགས་འདུག་པས། ཉེ་བའི་ལོ་ཤས་སྔོན་ཧི་མ་ལ་ཡའི་ཆོས་ཚོགས་ཀྱི་དྲུང་ཆེ་རོ་ཤན་ལཱལ་ནེ་གི་ལགས་ནས། ཧིན་དིའི་སྐད་དུ་སྒྲ་བསྒྱུར་མཛད་དེ། འདི་ག་ཆོས་ཚོགས་ནས་ཧིན་བོད་ཤན་སྦྱར་དུ་དཔར་སྐྲུན་ཞུས་ཏེ་དཔེ་དེབ་ཀྱི་ཚུལ་དུ་ཞུགས་ཡོད་པ་དེ་ཉིད་གཞིར་བཟུང་སྟེ། ད་ལམ་ཧི་མཱ་ལ་ཡའི་ཆོས་ཚོགས་ཀྱི་རེ་ཞུས་བཞིན། སྐུ་ཞབས་རོ་ཤན་ལཱལ་ནེ་གི་ལགས་དང་། སྐུ་ཞབས་བྷི་ཛཡ་རཛ་བཛྲཱཙཪྱ་གཉིས་ནས། བལ་པོའི་སྐད་དུའང་སྒྲ་བསྒྱུར་མཛད་པ་འདི་ཡང་བལ་བོད་སྐད་གཉིས་ཤན་སྦྱར་གྱི་ཚུལ་དུ་དཔར་བསྐྲུན་འགྲེམས་སྤེལ་ཞུ་རྒྱུ་ལགས།

འདིར་འབད་རྣམ་དཀར་གྱི་དགེ་བས། གོང་ས་སྐྱབས་མགོན་རྒྱལ་བ་ཡིད་བཞིན་ནོར་བུ་མཆོག་གི་སྐུ་ཚེ་ཞབས་པད་བརྟན་ཅིང་། ཐབས་ཆེན་མཛད་འཕྲིན་གྱིས་བོད་ལྗོངས་རང་དབང་གཙང་མའི་དཔལ་ལ་ལོངས་སུ་སྤྱོད་པ་དང་། ལྷ་དང་བཅས་པའི་སྐྱེ་འགྲོ་རྣམས་རིང་མིན་རྣམ་མཁྱེན་རྒྱལ་བའི་གོ་འཕང་ལ་འགོད་པའི་རྒྱུར་འགྱུར་བར་ཤོག་ཅིག

ཅེས་བསྔོ་སྨོན་རྣམ་པར་དག་པའི་མཚམས་སྦྱོར་དང་འབྲེལ། ཧིན་དྷི་དང་བལ་སྐད་དུ་སྒྱུར་བ་པོ་དང་། དཔར་སྐྲུན་འཕྲུལ་པར་གྱི་མཐུན་འགྱུར་རོགས་རམ་མཛད་མཁན་རྣམས་ལ། ཧི་མ་ལ་ཡའི་ཆོས་རིག་འཛིན་སྐྱོང་ཚོགས་པའི་ཚབ་ཞུས་ཏེ། སྙིང་ནས་ཐུགས་རྗེ་ཆེ་ཞུ་རྒྱུ་དང་། འདི་ཉིད་ཐོས་བསམ་མཛད་མཁན་རྣམས་ལའང་མཚམས་འདྲི་བཀྲ་ཤིས་བདེ་ལེགས་ཞུ།།

དགེ་སློང་ཆོས་འཕེལ་བཟོད་པ།

༄ བསྒོམ་རིམ་བར་པ།

आचार्य कमलशील विरचित
भावनाक्रम
[द्वितीय]

༄༅། །རྒྱ་གར་སྐད་དུ། བྷ་ཝ་ནཱ་ཀྲ་མ།

भारतीय भाषा (संस्कृत) मा (यस ग्रन्थको नाम) भावनाक्रम हो ।

བོད་སྐད་དུ། སྒོམ་པའི་རིམ་པ།

भोट भाषामा (यस ग्रन्थको नाम) बस्गोम-पई-रिम-पा (हो) ।

འཇམ་དཔལ་གཞོན་ནུར་གྱུར་པ་ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ། །

(म) मञ्जुश्री कुमारभूतलाई प्रणाम (गर्दछु) ।

ཐེག་པ་ཆེན་པོའི་མདོ་སྡེའི་ཚུལ་གྱི་རྗེས་སུ་འཇུག་པ་རྣམས་ཀྱི་སྒོམ་པའི་རིམ་པ་མདོར་བཤད་དོ། །འདི་ལ་ཐམས་ཅད་མཁྱེན་པ་ཉིད་ཤིན་ཏུ་མྱུར་དུ་ཐོབ་པར་འདོད་པ་རྟོག་པ་དང་ལྡན་པས་དེ་ཐོབ་པར་བྱེད་པའི་རྒྱུ་རྣམས་དང་རྐྱེན་རྣམས་ལ་མངོན་པར་བརྩོན་པར་བྱའོ།།

महायान-सूत्रनयमा अनुसरण गर्नेहरु का लागि भावनाक्रम संक्षेपमा भन्दैछु। यहाँ सर्वज्ञतालाई अतिछिटो प्राप्त गर्ने इच्छुक दृढं संकल्प गर्नेहरुले त्यसलाई प्राप्त गराउने हेतु तथा प्रत्ययहरुमा प्रयत्नशील हुनुपर्दछ ।

འདི་ལྟར་ཐམས་ཅད་མཁྱེན་པ་ཉིད་འདི་ནི་རྒྱུ་མེད་པ་ལས་འབྱུང་བར་མི་རུང་སྟེ། ཐམས་ཅད་ཀྱང་དུས་ཐམས་ཅད་དུ་ཐམས་ཅད

མཁྱེན་པ་ཉིད་དུ་འབྱུང་བར་ཐལ་བར་འགྱུར་བའི་ཕྱིར་རོ། །ལྟོས་པ་མེད་པར་འབྱུང་ན་ནི་གང་དུ་ཡང་ཐོགས་པར་མི་རུང་སྟེ། གང་གིས་ན་ཐམས་ཅད་ཀྱང་ཐམས་ཅད་མཁྱེན་པ་ཉིད་དུ་མི་འགྱུར་རོ། །དེ་ལྟ་བས་ན་ལ་ལར་བརྒྱ་ལམ་ན་འགའ་ཞིག་འབྱུང་དུ་ཟད་པས་དངོས་པོ་ཐམས་ཅད་ནི་རྒྱུ་ལ་ལྟོས་པ་ཁོ་ན་ཡིན་ནོ། །ཐམས་ཅད་མཁྱེན་པ་ཉིད་དུ་ཡང་ལ་ལར་བརྒྱ་ལམ་ན་འགའ་ཞིག་འགྱུར་ཏེ། དུས་ཐལས་ཅད་དུ་མ་ཡིན། གནས་ཐམས་ཅད་དུ་ཡང་མ་ཡིན། ཐམས་ཅད་ཀྱང་མ་ཡིན་པས་དེའི་ཕྱིར་དེ་ནི་རྒྱུ་དང་རྐྱེན་ལ་ལྟོས་པར་ངེས་སོ། །རྒྱུ་དང་རྐྱེན་དེ་དག་གི་ནང་ནས་ཀྱང་མ་ནོར་ཅིང་མ་ཚང་བ་མེད་པ་རྣམས་བསྟེན་པར་བྱའོ།།

यसरी यस सर्वज्ञताको हेतु विना सम्भव छैन, किनकि सबैलाई सधैं सर्वज्ञता प्राप्त हुने प्रसंङ्ग हून्छन् । निरपेक्षता भएमा त्यो कींह पनि प्रतिहत (पछाडि ढकेल्न सक्दैन) ढहुँदैन् । किनकि सबै सधै सर्वज्ञ हुन सक्दैन, यसैले कसैको कहिले केहि भएमा सबै वस्तुहरु हेतुमा आश्रित नै छ । सर्वज्ञता पनि कसैलाई कहिले काहि संभव छन् , सबै कालहरुमा हुँदैन, सबै स्थानहरु मा पनि हुँदैन, सबैलाई पनि हुँदैन यसैले त्यसलाई हेतु तथा प्रत्ययहरुमा आश्रि ा हुनु निश्चित छ । हेतु तथा प्रत्ययहरुमा पनि अभ्रान्त तथा समग्र हेतुको सेवन गर्नु पर्दछ ।

རྒྱུ་ནོར་བ་ལ་ནན་ཏན་བྱས་ན་ནི་ཡུན་ཤིན་ཏུ་རིང་པོ་ཞིག་གིས་ཀྱང་འདོད་པའི་འབྲས་བུ་འཐོབ་པ་མེད་དོ། དཔེར་ན། རྭ་ལས་འོ་མ་བཞོ་བ་བཞིན་ནོ། །རྒྱུ་མཐའ་དག་མ་སྐྱེད་པ་ལས་ཀྱང་འབྲས་བུ་འབྱུང་བ་མེད་དེ། ས་བོན་ལ་སོགས་པ་གང་ཡང་རུང་བ་ཞིག་མེད་ན་

རྭ་ག་ལ་སོགས་པ་འབྲས་བུ་མི་འབྱུང་བའི་ཕྱིར་རོ། །དེ་ལྟ་བས་ན་འབྲས་བུ་དེ་འདོད་པས་རྒྱུ་དང་རྐྱེན་མ་ནོར་བ་དང་མཐའ་དག་ལ་བསྟེན་པར་བྱའོ།།

भ्रान्त हेतुहरुको अनुष्ठान गर्नाले (=कार्यमा लाग्न) अत्यन्त लामो समयमा पनि इष्ट फलको प्राप्त हुन सक्दैन, जस्तो कि (गाई को) सींगबाट दूध दुहनु । यो यसैको समान हुन् । समस्त हेतुहरुको उपयोग गरे विना फलको उत्पत्ति हुन सक्दैन, किनकि बीज (पानी, मल, हावा) आदिमा कुनै एक को कमी भएमा अंकुर आदि फल उत्पन्न हुँदैन यसैले त्यस फललाई चाहनेहरु समस्त अभ्रान्त हेतु तथा प्रत्ययहरुको सेवन गर्नु पर्दछ ।

འབྲས་བུ་ཐམས་ཅད་མཁྱེན་པ་ཉིད་ཀྱི་རྒྱུ་དང་རྐྱེན་དེ་དག་གང་ཞེ་ན། སྨྲས་པ། བདག་ལྟ་བུ་དམུས་ལོང་དང་འདྲ་བས་དེ་དག་བསྟན་པར་མི་ནུས་མོད་ཀྱི། འོན་ཀྱང་བཅོམ་ལྡན་འདས་ཉིད་ཀྱིས་མངོན་པར་རྫོགས་པར་སངས་རྒྱས་ནས་གདུལ་བྱ་རྣམས་ལ་ཇི་སྐད་བཤད་པ་དེ་བཞིན་དུ་བདག་གིས་བཅོམ་ལྡན་འདས་ཀྱི་བཀའ་ཉིད་ཀྱིས་བཤད་དོ། ། **བཅོམ་ལྡན་འདས་ཀྱིས་**དེར་བཀའ་སྩལ་པ། "གསང་བའི་བདག་པོ་ཐམས་ཅད་མཁྱེན་པའི་ཡེ་ཤེས་དེ་ནི་སྙིང་རྗེའི་རྩ་བ་ལས་བྱུང་བ་ཡིན། བྱང་ཆུབ་ཀྱི་སེམས་ཀྱི་རྒྱུ་ལས་བྱུང་བ་ཡིན། ཐབས་ཀྱིས་མཐར་ཕྱིན་པ་ཡིན་ནོ།" །ཞེས་འབྱུང་ངོ་། །དེ་ལྟ་བས་ན་ཐམས་ཅད་མཁྱེན་པ་ཉིད་ཐོབ་པར་འདོད་པས་**སྙིང་རྗེ་**དང་། **བྱང་ཆུབ་ཀྱི་སེམས་**དང་། **ཐབས་**དང་གསུམ་པོ་འདི་དག་ལ་བསླབ་པར་བྱའོ།

फल (रूपी) सर्वज्ञता को हेतु र प्रत्यय के हो ? भनिएको छ कि—यद्यपि जात्यान्ध (जन्मदेखि अन्धा) को समान म जस्तो ले त्यो सबै भन्न सकिन्दैन, फेरि पनि स्वयं भगवान् ले नै अभिसम्बुद्ध भएर विनेयजनहरुको लागि जस्तै भन्नु भएको थियो, उसी प्रकार म पनि भगवान् (बुद्ध) का वचनहरु को आधारमा भन्दछु । भगवान् ले त्यसलाई भन्नु भएको थियो—''हे गुह्याधिपते । त्यो सर्वज्ञ को ज्ञान करुणाको मूलबाट उत्पन्न भएका हुन बोधिचित्तको हेतुबाट उत्पन्न हुन्छन् । उपायको पारंगत (अन्तिम) सीमा भएका हुन ।'' त्यसैले सर्वज्ञताको प्राप्ति का इच्छुकहरुले करूणा, बोधिचित्त तथा (त्यसको) उपाय यी तीनैवटा को शिक्षा ग्रहण गर्नु पर्दछ ।

སྙིང་རྗེས་བསྐྱོད་ན་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའ་རྣམས་སེམས་ཅན་ཐམས་ཅད་མངོན་པར་གདོན་པའི་ཕྱིར་ངེས་པར་དམ་འཆའ་བར་འགྱུར་རོ། །དེ་ནས་བདག་ཉིད་ལ་ལྟ་བ་བསལ་ནས་ཤིན་ཏུ་བྱ་དཀའ་ཞིང་རྒྱུན་མི་ཆད་ལ་ཡུན་རིང་པོར་བསྒྲུབས་པའི་བསོད་ནམས་དང་ཡེ་ཤེས་ཀྱི་ཚོགས་ལ་གུས་པར་འཇུག་གོ། དེར་ཞུགས་ནས་ངེས་པར་བསོད་ནམས་དང་ཡེ་ཤེས་ཀྱི་ཚོགས་ཡོངས་སུ་རྫོགས་པར་སྒྲུབ་བོ། །ཚོགས་རྣམས་ཡོངས་སུ་རྫོགས་ན་ཐམས་ཅད་མཁྱེན་པ་ཉིད་ལག་མཐིལ་དུ་ཐོབ་པ་དང་འདྲ་བར་འགྱུར་རོ། །དེ་བས་ན་ཐམས་ཅད་མཁྱེན་པ་ཉིད་ཀྱི་རྩ་བ་ནི་སྙིང་རྗེ་ཁོ་ན་ཡིན་པས་དེ་ནི་ཐོག་མ་ཁོ་ནར་གོམས་པར་བྱའོ།།

ཆོས་ཡང་དག་པར་སྡུད་པ་ལས་ཀྱང་བཀའ་སྩལ་ཏེ། "བཅོམ་ལྡན་འདས་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔས་ཆོས་རབ་ཏུ་མང་པོ་ལ་བསླབ་པར་མི་བགྱིའོ། །བཅོམ་ལྡན་འདས་བྱང་ཆུབ་སེམས་པས་ཆོས་གཅིག་རབ་ཏུ་

གཟུང་ཞིང་ རབ་ཏུ་རྟོགས་པར་བགྱིས་ན་སངས་རྒྱས་ཀྱི་ཆོས་ཐམས་ཅད་
དེའི་ལག་མཐིལ་དུ་མཆིས་པ་ལགས་སོ།། ཆོས་གཅིག་པོ་གང་ཞེ་ན།
འདི་ལྟ་སྟེ་སྙིང་རྗེ་ཆེན་པོའོ།" །ཞེས་འབྱུང་ངོ་།།

करुणाले प्रेरित भएर बोधिसत्त्व सबै प्राणिहरुको उद्धारको लागि अवश्य नै प्रतिज्ञा गर्दछौ । यस पछि आत्मदृष्टि लाई छोडेर, अत्यन्त कठिन भएता पनि लगातार लामो समयमा सिद्ध गरिएको पुण्य एवं ज्ञानसंभारहरुमा आदरले प्रवृत्ति गर्दछ । वहाँ प्रवेश गरेर अवश्य नै पुण्य एवं ज्ञानसम्भारहरु लाई परिपूर्णत: सिद्ध गर्नेछ । सम्भारहरुको परिपूर्ण भए पछि सर्वज्ञता हाथमा प्राप्त भएको समान हुन्छन् । अत: करुणा नै सर्वज्ञताको मूल भएको कारणले त्यसैको सर्वप्रथम अभ्यास गर्नु पर्दछ । जस्तो कि **आर्यधर्मसंगीतिमा** पनि भनिएको छ—"हे भगवन् ! बोधिसत्त्वहरुले अनेक धर्महरुको शिक्षा ग्रहण गर्नु ऊचित छैन। भगवान् ! बोधिसत्त्वले एऊटै धर्मलाई ग्रहण गरेर त्यसैलाई राम्ररी जानी सके पछि सबै बुद्ध-धर्म त्यसको हाथमा विद्यमान हुन जान्छन् । त्यो एक धर्म कुन चाहि हुन ? त्यो (एक धर्म हो) "महाकरुणा ।"

སྙིང་རྗེ་ཆེན་པོས་ཡོངས་སུ་ཟིན་པས་ན་སངས་རྒྱས་བཅོམ་ལྡན་འདས་རྣམས་རང་གི་དོན་ཕུན་སུམ་ཚོགས་པ་མཐའ་དག་བརྙེས་ཀྱང་སེམས་ཅན་གྱི་ཁམས་མཐར་ཐུག་པའི་བར་དུ་བཞུགས་པར་མཛད་དོ།། ཉན་ཐོས་བཞིན་དུ་མྱ་ངན་ལས་འདས་པའི་གྲོང་ཁྱེར་ཤིན་ཏུ་ཞི་བར་ཡང་འཇུག་པར་མི་མཛད་དེ། སེམས་ཅན་ལ་གཟིགས་ནས་མྱ་ངན་ལས་འདས་པའི་གྲོང་ཁྱེར་ཞི་བ་དེ་ལྕགས་ཀྱི་ཁང་པ་འབར་བ་བཞིན་དུ་ཐག་རིང་དུ་སྤོང་བས་བཅོམ་ལྡན་འདས་རྣམས་ཀྱི་མི་གནས་པའི་མྱ་ངན་ལས་འདས་པའི་རྒྱུ་ནི་སྙིང་རྗེ་ཆེན་པོ་དེ་ཉིད་ཡིན་ནོ།།

महाकरुणा द्वारा परिगृहीत (=समाति राखेको) भएकोले भगवान् बुद्धहरुले समस्त स्वार्थ सम्पत्तिको पूर्णतया प्राप्त भए पछि पनि सत्त्वधातुको अन्त सम्म रहने गर्दछन् । श्रावकको जस्तै अत्यन्त शान्त निर्वाण रूपी नगरमा पनि प्रवेश गर्दैन्थ्यो । (दु:खी) प्राणिहरुको दशालाई देखेर त्यस शान्त निर्वाण नगरलाई अयोगृह (जलिरहेको फलामको घर) को समान टाढा छोड्नाले भगवान्हरु (बुद्धहरु) को अप्रतिष्ठित निर्वाणको हेतु त त्यो महाकरुणा नै हुन् ।

དེ་ལ་སྙིང་རྗེ་བསྒོམ་པའི་རིམ་པ་དེ་དང་པོ་འཇུག་པ་ནས་བརྩམས་ཏེ་བརྗོད་པར་བྱའོ། །ཐོག་མར་རེ་ཞིག་བཏང་སྙོམས་བསྒོམས་པས་སེམས་ཅན་ཐམས་ཅད་ལ་རྗེས་སུ་ཆགས་པ་དང་། ཁོང་ཁྲོ་བ་བསལ་ཏེ་སྙོམས་པའི་སེམས་ཉིད་བསྒྲུབ་པར་བྱའོ།།

यहाँ त्यस करुणाको भवनाको क्रम: प्रथम-प्रवेशबाट शुरु गरेर भन्ने गर्नु पर्दछ । यसमा सबै भन्दा पहिला उपेक्षाको भावना (=अभ्यास) बाट सबै प्राणिहरुको प्रति अनुराग (=आसक्ति) र द्वेष (ईर्ष्या वा घृणा) लाई दूर गरेर समचित्तता नै सिद्ध गर्नु पर्दछ ।

སེམས་ཅན་ཐམས་ཅད་བདེ་བ་ནི་འདོད་སྡུག་བསྔལ་བ་ནི་མི་འདོད་ལ། ཐོག་མ་མེད་པ་ཅན་གྱི་འཁོར་བ་ན་སེམས་ཅན་གང་ལན་བརྒྱར་བདག་གི་གཉེན་དུ་མ་གྱུར་པ་དེ་གང་ཡང་མེད་དོ་སྙམ་དུ་ཡོངས་སུ་བསམ་ཞིང་། འདི་ལ་བྱེ་བྲག་ཅི་ཞིག་ཡོད་ན་ལ་ལ་ལ་ནི་རྗེས་སུ་ཆགས། ལ་ལ་ལ་ནི་ཁོང་ཁྲོ་བར་གྱུར། དེ་ལྟ་བས་ན་བདག་གིས་སེམས་ཅན་ཐམས་ཅད་ལ་སེམས་སྙོམས་པ་ཉིད་དུ་བྱའོ། །སྙམ་དུ་དེ་

ལྷར་ཡིད་ལ་བྱ་ཞིང་བར་མའི་ཕྱོགས་ནས་བརྩམས་ཏེ། མཛའ་བཤེས་
དང་དགྲ་ལ་ཡང་སེམས་སྙོམས་པ་ཉིད་དུ་བསྒོམ་མོ།།

सबै प्राणी सुखी चाहन्छन्, दु:ख चाहन्दैन । अनादि कालदेखि चलेर आएको संसारमा जुन सत्त्वहरुमा मेरो नातागोता न बनेको कुनै पनि छैन, यस्तो कुनै पनि छैन, यस्तो सोच्दैमा यसमा के अन्तर हुन्छु? कसैसंग अनुराग, (=आसक्ति), कसैसंग द्वेष हुन गएको कारण म सबै प्राणिहरुमा चित्तसमता गर्नेछु, यस्तो सोचेर मध्यस्थ भावबाट शुरु गरेर मित्रबन्धु तथा शत्रुमा पनि चित्तसमताकै भावना (=अभ्यास) गर्नु पर्दछन् ।

དེ་ནས་སེམས་ཅན་ཐམས་ཅད་ལ་སེམས་སྙོམས་པ་ཉིད་དུ་
བསྒྲུབས་ནས་བྱམས་པ་བསྒོམ་མོ། །བྱམས་པའི་ཆུས་སེམས་ཀྱི་
རྒྱུད་བརླན་ཏེ་གསེར[1]ཡོད་པའི་ས་གཞི་བཞིན་དུ་བྱས་ལ་སྙིང་རྗེའི་ས་བོན་
བཏབ་ན་བདེ་བླག་ཏུ་ཤིན་ཏུ་ཡོངས་སུ་རྒྱས་པར་འགྱུར་རོ། །དེ་ནས་
སེམས་ཀྱི་རྒྱུད་བྱམས་པས་བསྒོས་ནས་སྙིང་རྗེ་བསྒོམ་པར་བྱའོ།།

यस पछि सबै प्राणिहरुमा चित्तसमता (बराबर) सिद्ध गरेर मैत्री भावना (=अभ्यास) गर्नु पर्दछ । मैत्री को जलबाट चित्त सन्तति लाई सींचेर त्यसलाई सुवर्णयुक्त भूमिको जस्तै बनाएर (त्यसमा) करुणा को बीज रोपि दिए सुचारु रूपबाट अत्यन्त विकास हुन्छन् । त्यस पछि चित्त सन्ततिलाई मैत्रीबाट लिप्त (पूर्ण) गरेर करुणाको भावना गर्नु पर्दछ ।

སྙིང་རྗེ་དེ་ནི་སེམས་ཅན་སྡུག་བསྔལ་བ་ཐམས་ཅད་སྡུག་བསྔལ་དེ་
དང་བྲལ་བར་འདོད་པའི་རྣམ་པ་ཡིན་ན། ཁམས་གསུམ་པའི་སེམས་

1 གསེར་ = གཤེར་

ཅན་ཐམས་ཅད་ནི་སྡུག་བསྔལ་ཉིད་རྣམ་པ་གསུམ་གྱིས་ཅི་རིགས་པར་ཤིན་ཏུ་སྡུག་བསྔལ་བ་དག་ཡིན་པས་དེའི་ཕྱིར་སེམས་ཅན་ཐམས་ཅད་ལ་དེ་བསྒོམ་པར་བྱ་སྟེ། འདི་ལྟར་རེ་ཞིག་སེམས་ཅན་དམྱལ་བ་པའི་སེམས་ཅན་གང་དག་ཡིན་པ་དེ་དག་ནི་རྒྱུན་མི་ཆད་ཅིང་ཡུན་རིང་ལ་ཚ་བ་ལ་སོགས་པའི་སྡུག་བསྔལ་སྣ་ཚོགས་ཀྱི་ཆུ་བོར་བྱིང་བ་བཀོ་ན་ཡིན་ནོ།། ཞེས་བཅོམ་ལྡན་འདས་ཀྱིས་བཀའ་སྩལ་ཏོ།།

त्यो करुणा सबै दु:खी प्राणिहरु का ती दु:खहरुलाई अलग गराउने इच्छाको आकार का हुन् । तीनैधातु का सबै प्राणी तीन प्रकरका दु:खबाट यथायोग अत्यन्त दु:खी छन्, अत: सबै प्राणीहरुमा त्यस (करुणा) को भावना गर्नु पर्दछ । त्यो समय यस प्रकार जुन नरकको प्राणी छन् त्यो बिना रोकि लामो समय सम्म जलन आदि विभिन्न दु:ख रूपी नदी मा डुबी राखेको छन् । यस्तो भगवान् (बुद्ध) ले भन्नु भएको थियो ।

དེ་བཞིན་དུ་ཡི་དྭགས་རྣམས་ཀྱང་ཕལ་ཆེར་ཤིན་ཏུ་མི་བཟད་པའི་བཀྲེས་པ་དང་སྐོམ་པའི་སྡུག་བསྔལ་གྱི་མེས་བསྐམས་པའི་ལུས་ཤིན་ཏུ་སྡུག་བསྔལ་མང་པོ་མྱོང་ངོ་། །ཞེས་བཀའ་སྩལ་ཏོ། །དུད་འགྲོ་རྣམས་ཀྱང་གཅིག་ལ་གཅིག་ཟ་བ་དང་། ཁྲོ་བ་དང་། གསོད་པ་དང་། རྣམ་པར་འཚེ་བ་ལ་སོགས་པའི་སྡུག་བསྔལ་རྣམ་པ་མང་པོ་མྱོང་བ་ཁོ་ནར་སྣང་ངོ་། །མི་རྣམས་ཀྱང་འདོད་པ་ཡོངས་སུ་ཚོལ་བས་ཕོངས་ནས་གཅིག་ལ་གཅིག་འཁྲུ་བ་དང་། གནོད་པ་བྱེད་པ་དང་། སྡུག་པ་དང་བྲལ་བ་དང་། མི་སྡུག་པ་དང་ཕྲད་པ་དང་། དབུལ་ཕོངས་ལས་གྱུར་པ་ལ་སོགས་པའི་སྡུག་བསྔལ་དཔག་ཏུ་མེད་པ་ཉམས་སུ་མྱོང་བར་སྣང་ངོ་།།

यस प्रकार प्रेत पनि प्राय: अत्यन्त असहनीय भोक र प्यास आदि दु:खहरु को अग्निबाट सुखेको शरीर भएर घोर दु:खहरुको अनुभव गर्दछन् । यस्तो (बुद्ध ले) भन्नुभएको छ । पशु पनि एक अर्कोलाई भक्षण (खानु), क्रोध (रिसाउनु) मार्नु, हिंसा आदि अनेक प्रकारको दु:खहरु को अनुभव गर्दै गरेको देखिन्छन् । मनुष्य पनि इच्छित वस्तुको खोजीमा दरिद्र भएर एक अर्काको द्रोह गरेर (अर्काको कुभलो चिताउने काम) र बाधा पुर्याउनु, प्रियबाट छुटिनु र अप्रिय संग मिलु (संयोग हुनु), गरीबी आदि बाट हुने अन्त रहित अप्रमेय दु:खहरु को अनुभव गर्दै गरेको देखिन्छन् ।

གང་དག་འདོད་ཆགས་ལ་སོགས་པའི་ཉོན་མོངས་པས་ཀུན་ནས་དཀྲིས་པ་སྣ་ཚོགས་ཀྱིས་སེམས་དཀྲིས་པ་དག་དང་། གང་དག་ལྟ་བ་ངན་པ་རྣམ་པ་སྣ་ཚོགས་གཟིང་གཟིང་བར་གྱུར་པ་དེ་ཐམས་ཅད་ཀྱང་སྡུག་བསྔལ་གྱི་རྒྱུ་ཡིན་པས་གད་ཀ་ན་འདུག་པ་བཞིན་དུ་མིན་དུ་སྡུག་བསྔལ་བ་ཁོ་ན་ཡིན་ནོ། །ལྷ་རྣམས་ཀྱང་ཐམས་ཅད་འགྱུར་བའི་སྡུག་བསྔལ་ཉིད་ཀྱིས་སྡུག་བསྔལ་བ་དག་སྟེ། འདོད་པ་ན་སྤྱོད་པའི་ལྷ་གང་དག་ཡིན་པ་དེ་དག་ནི་རྟག་ཏུ་འཆི་འཕོ་བ་དང་ལྟུང་བ་ལ་སོགས་པའི་འཇིགས་པའི་མྱ་ངན་གྱིས་སེམས་ལ་གནོན་ན་ཇི་ལྟར་བདེ། འདུ་བྱེད་ཀྱི་སྡུག་བསྔལ་ཉིད་ནི་ལས་དང་ཉོན་མོངས་པའི་མཚན་ཉིད་ཀྱི་རྒྱུའི་གཞན་གྱི་དབང་གི་ངོ་བོ་ཉིད་དང་། སྐད་ཅིག་རེ་རེ་ལ་འཇིག་པའི་ངང་ཅན་གྱི་མཚན་ཉིད་དེ། འགྲོ་བ་ཐམས་ཅད་ལ་ཁྱབ་པ་ཡིན་ནོ།།

जुन मानिसहरु राग आदि अनेक क्लेशले भरिएको आशक्तिबाट लिप्त चित्तमा छन् र जुन मानिस विभिन्न कुदृष्टिहरुमा गहन रूपले डुबिएका छन्, ती सबै दु:खका हेतु भएको कारणले प्रपात जस्तै (=कुनै ठाडै तलतिर खस्ने अग्लो

ठाउं, भीर-पहराको चुली) मा बसि राखेका (व्यक्ति) को जस्तै घेरै दु:खी छन् । देवता पनि सबै विपरिणाममा विचरण गर्ने जुन देवता छन्. तिनी पनि सधैं च्युति (=मृत्यु समिप) र (मृत्युलोक अथवा नरक, प्रेत, पशु, योनिमा) पतन आदि भएको शोकबाट पीड़ित चित्त भएको कारण तीनी कसरी सुखी हुन्छन् ? संस्कारदु:ख नै कर्म र क्लेशको लक्षण युक्त, परतन्त्र स्वभाव भएको र प्रतिक्षणमा उत्पत्ति र विनाश हुने स्वभाव लक्षणले युक्त भएका जुन समस्त संसारमा (गतिमा) व्याप्त (=फैलिएको) छन् ।

དེ་བས་ན་འགྲོ་བ་མཐའ་དག་ནི་སྡུག་བསྔལ་གྱི་མེ་ལྕེ་འབར་བའི་ནང་དུ་ཞུགས་པ་ཡིན་པར་བལྟས་ལ། ཇི་ལྟར་བདག་སྡུག་བསྔལ་མི་འདོད་པ་ལྟར་གཞན་ཐམས་ཅད་ཀྱང་དེ་དང་འདྲའོ་སྙམ་དུ་བསམ་ཞིང་། ཀྱེ་མ་ཀྱི་ཧུད་བདག་ལ་སྡུག་པའི་སེམས་ཅན་འདི་དག་སྡུག་བསྔལ་ན། སྡུག་བསྔལ་དེ་ལས་ཇི་ལྟར་ཐར་བར་བྱ་ཞེས་བདག་ཉིད་སྡུག་བསྔལ་བ་བཞིན་དུ་བྱེད་ཅིང་དེ་དང་བྲལ་བར་འདོད་པའི་རྣམ་པའི་སྙིང་རྗེ་དེས་ཏིང་ངེ་འཛིན་ལ་འདུག་ཀྱང་རུང་། སྤྱོད་ལམ་ཐམས་ཅད་དུ་ཡང་རུང་སྟེ། དུས་ཐམས་ཅད་དུ་སེམས་ཅན་ཐམས་ཅད་ལ་བསྒོམ་པར་བྱ་སྟེ། ཐོག་མ་ཁོ་ནར་མཛའ་བཤེས་ཀྱི་ཕྱོགས་རྣམས་ལ་ཇི་སྐད་བསྟན་པའི་སྡུག་བསྔལ་སྣ་ཚོགས་ཉམས་སུ་མྱོང་བར་མཐོང་བས་བསྒོམ་པར་བྱའོ།།

यसैले समस्त जगतलाई दु:ख रूपी अग्निको ज्वाला भित्र प्रविष्ट भएको देखेर जस्तै मलाई धेरै दु:ख छन् त्यस्तै प्रकार अन्य सबै प्राणीहरुलाई पनि उसी प्रकार दु:ख छन् होला यस्तो सोच्दै—हरे ! यी दु:खी मेरो प्रिय ती दु:खहरुबाट कसरी मुक्त हुन्छन्, यसरी उसलाई आफ्नो दु:खहरुको समान मानेर उनीबाट छुटकारा दिलाउने इच्छा रूपी करुणाले चाहे

समाधिमा स्थित हो, अथवा सबै प्रकारको चारिकाहरुमा होस् सधैं सबै प्राणिहरुको हितको भावना गर्नु पर्दछ । सबै भन्दा पहिले मित्र–बन्धुहरुको पक्षमा पूर्वोक्त (पहिला भएको) विभिन्न दु:खहरुको अनुभवहरुलाई देखेर त्यस करुणाको भावना गर्नु पर्दछ ।

དེ་ནས་སེམས་ཅན་མཉམ་པ་ཉིད་ཀྱིས་བྱེ་བྲག་མེད་པར་མཐོང་ནས་སེམས་ཅན་ཐམས་ཅད་ནི་བདག་གི་གཉེན་དུ་གྱུར་པ་ཁོ་ནའོ་སྙམ་དུ་ཡོངས་སུ་བསམ་ཞིང་བར་མའི་ཕྱོགས་རྣམས་ལ་བསྒོམ་པར་བྱའོ།། གང་གི་ཚེ་དེ་ལ་མཛའ་བཤེས་ཀྱི་ཕྱོགས་བཞིན་དུ་སྙིང་རྗེ་དེ་མཉམ་པར་ཞུགས་པར་གྱུར་པ་དེའི་ཚེ་ཕྱོགས་བཅུའི་སེམས་ཅན་ཐམས་ཅད་ལ་བསྒོམ་པར་བྱའོ། །གང་གི་ཚེ་བུ་ཆུང་ངུ་སྡུག་པ་སྡུག་བསྔལ་བར་གྱུར་པའི་མ་བཞིན་དུ་བདག་ཉིད་ཀྱིས་ཤིན་ཏུ་སྡུག་པ་སྡུག་བསྔལ་བ་ལས་འདོན་པར་འདོད་པའི་རྣམ་པ་རང་གི་ངང་གིས་འཇུག་པའི་སྙིང་རྗེ་དེ་སེམས་ཅན་ཐམས་ཅད་ལ་མཉམ་པར་ཞུགས་པར་གྱུར་པ་དེའི་ཚེ་རྫོགས་པ་ཞེས་བྱ་སྟེ། སྙིང་རྗེ་ཆེན་པོའི་མིང་ཡང་འཐོབ་བོ།།

त्यस पछि प्राणिहरु मा समताको कारण अन्तर (भिन्नता) न देखेर 'सबै प्राणी मेरो नातागोता नै हुन'— यसरी भली प्रकारले सोचेर मध्य पक्षहरुले सोच्नु पर्दछ करुणा समानरूपले प्रवृत्त हुन लागे तब सबै दसै दिशाहरुमा सबै प्राणीहरु प्रति भावना गर्नु पर्दछ । जब दु:खी प्रिय शिशुको आमाको जस्तै स्वयं नै अत्यन्त प्रियको दु:खले उद्धार गर्ने इच्छाको आकार का (करुणा) अनयास रूपमा प्रवाहित हुन लाग्ने करुणा सबै प्रणिहरुमा समानरूपले प्रवृत्त हुन्छन, तब त्यो निष्पन्न (=सम्पन्न अथवा पूरा कार्यान्वित) मानिन्छन् । (र उसलाई) महाकरुणाको नाम पनि प्राप्त हुन्छन् ।

བྱམས་པ་བསྒོམ་པ་ནི་མཛའ་བཤེས་ཀྱི་ཕྱོགས་ལ་ཐོག་མར་བྱས་ནས་བདེ་བ་དང་ཕྲད་པར་འདོད་པའི་རྣམ་པ་སྟེ། རིམ་གྱིས་ཐ་མལ་པ་དང་དགྲ་ལ་ཡང་བསྒོམ་པར་བྱའོ། །དེ་ལྟར་དེ་སྙིང་རྗེ་གོམས་པར་བྱས་ནས། རིམ་གྱིས་སེམས་ཅན་མཐའ་དག་མངོན་པར་འདོན་པར་འདོད་པ་རང་གི་ངང་གིས་འབྱུང་བ་ཉིད་དུ་འགྱུར་རོ།།

मैत्री भावना पहिले मित्रपक्षको र सुखसंयोग का इच्छाको आकार भएको हुन्छन् (यसरी नै) क्रमबाट शत्रुलाई पनि भावना गर्नु पर्दछ । यस प्रकार त्यस करुणाको अभ्यास गर्नाले क्रमश: सबै प्राणीहरु को अभ्युद्धरण गर्ने इच्छा अनायास नै उत्पन्न हुन्छन् ।

དེས་ན་རྩ་བའི་སྙིང་རྗེ་གོམས་པར་བྱས་ནས་བྱང་ཆུབ་ཀྱི་སེམས་བསྒོམ་པར་བྱའོ། །བྱང་ཆུབ་ཀྱི་སེམས་དེ་ནི་རྣམ་པ་གཉིས་ཏེ། ཀུན་རྫོབ་དང་། དོན་དམ་པའོ། །དེ་ལ་ཀུན་རྫོབ་པ་ནི་སྙིང་རྗེས་སེམས་ཅན་མཐའ་དག་མངོན་པར་འདོན་པར་དམ་བཅས་ནས་འགྲོ་བ་ལ་ཕན་གདགས་པའི་ཕྱིར་སངས་རྒྱས་སུ་གྱུར་ཅིག་སྙམ་དུ་བླ་ན་མེད་པ་ཡང་དག་པར་རྫོགས་པའི་བྱང་ཆུབ་འདོད་པའི་རྣམ་པས་སེམས་དང་པོ་བསྐྱེད་པའོ། །དེ་ཡང་ཚུལ་ཁྲིམས་ཀྱི་ལེའུ་ལས་བསྟན་པའི་ཆོ་ག་བཞིན་དུ་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའི་སྡོམ་པ་ལ་གནས་པ་མཁས་པ་པ་རོལ་པོ་ལས་སེམས་བསྐྱེད་པར་བྱའོ།།

अत: मूल–करुणाको भावना गरेर बोधिचित्तको भावना गर्नु पर्दछ । यो बोधिचित्त दुई प्रकारका हुन्छन्— सम्वृत र परमार्थ । यसमा पहिला संवृत्तबोधिचित्त करुणा द्वारा समस्त प्राणिहरुको अभ्युद्धार को प्रतिज्ञा गरेर जगत् को हितको लागि

(म) बुद्ध हुन सकोस्, यस्तो अनुत्तर सम्यक्-सम्बोधिको इच्छाको आकार भएको प्रथम चित्त उत्पाद हुन्छन् । यसको लागि शील परिवर्तमा प्रदर्शित विधिको अनुसार बोधिसत्त्व संवर (=दिक्षा) मा स्थित अन्य विद्वान् बाट चित्तको उत्पाद गर्नु ।

དེ་ལྟར་ཀུན་རྫོབ་པའི་བྱང་ཆུབ་ཀྱི་སེམས་བསྐྱེད་ནས་དོན་དམ་པའི་བྱང་ཆུབ་ཀྱི་སེམས་བསྐྱེད་པའི་ཕྱིར་འབད་པར་བྱའོ། །དོན་དམ་པའི་བྱང་ཆུབ་ཀྱི་སེམས་དེ་ནི་འཇིག་རྟེན་ལས་འདས་པ་སྤྲོས་པ་མཐའ་དག་དང་བྲལ་བ། ཤིན་ཏུ་གསལ་བ། དོན་དམ་པའི་སྤྱོད་ཡུལ། དྲི་མ་མེད་པ། མི་གཡོ་བ། རླུང་མེད་པའི་མར་མེའི་རྒྱུན་ལྟར་མི་གཡོ་བའོ། །དེ་འགྲུབ་པ་ནི་རྟག་ཏུ་གུས་པར་ཡུན་རིང་དུ་ཞི་གནས་དང་ལྷག་མཐོང་གི་རྣལ་འབྱོར་གོམས་པར་བྱས་པ་ལས་འགྱུར་ཏེ། **འཕགས་པ་དགོངས་པ་ངེས་པར་འགྲེལ་པ་ལས།** ཇི་སྐད་དུ། "བྱམས་པ་གང་ཡང་ཉན་ཐོས་རྣམས་ཀྱིའམ། བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའ་རྣམས་ཀྱིའམ། དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་རྣམས་ཀྱི་དགེ་བའི་ཆོས་འཇིག་རྟེན་པ་དང་འཇིག་རྟེན་ལས་འདས་པ་ཐམས་ཅད་ཀྱང་ཞི་གནས་དང་ལྷག་མཐོང་གི་འབྲས་བུ་ཡིན་པར་རིག་པར་བྱའོ།" །ཞེས་གསུངས་པ་ལྟ་བུའོ། །དེ་གཉིས་ཀྱིས་ཏིང་ངེ་འཛིན་ཐམས་ཅད་བསྡུས་པའི་ཕྱིར་རྣལ་འབྱོར་པ་ཐམས་ཅད་ཀྱིས་དུས་ཐམས་ཅད་དུ་ངེས་པར་ཞི་གནས་དང་ལྷག་མཐོང་བསྟེན་པར་བྱ་སྟེ། **འཕགས་པ་དགོངས་པ་ངེས་པར་འགྲེལ་པ་**དེ་ཉིད་ལས། བཅོམ་ལྡན་འདས་ཀྱིས་ཇི་སྐད་དུ་" ངས་ཉན་ཐོས་རྣམས་དང་། བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའ་རྣམས་དང་། དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་རྣམས་ཀྱི་ཏིང་ངེ་འཛིན་རྣམ་པ་དུ་མ་བསྟན་པ་གང་དག་ཡིན་པ

དེ་དག་ཐམས་ཅད་ཞི་གནས་དང་ལྷག་མཐོང་གིས་བསྡུས་པར་རིག་པར་བྱའོ།" །ཞེས་གསུངས་པ་ལྟ་བུའོ།།

त्यस प्रकार संवृत बोधिचित्त उत्पन्न गरेर परमार्थ-बोधिचित्तको उत्पादको लागि प्रयत्न गर्नु पर्दछ । त्यो परमार्थ-बोधिचित्त त लोकोत्तर, समस्त प्रपञ्चहरुबाट रहित, अत्यन्त स्फुट, परमार्थ गोचर, निर्मल, निश्चल, वायुरहित प्रदीपप्रवाह (=लगातार जल्दै गरेको दीपक) को जस्तै निश्चल छ । त्यसको सिद्धि निरन्तर नम्रतापूर्वक लामो समय सम्म शमथ एवं विपश्यना योगको भावनाले हुन्छन् । जस्तो कि **आर्यसन्धिनिर्मोचन** (नाम महायान सूत्र) मा भनिएको छ—"मैत्रेय ! श्रावकहरु वा बोधिसत्त्वहरु अथवा तथागतहरु का जुन सुकै पनि सबै लौकिक तथा लोकोत्तर कुशल धर्म छन् उनलाई शमथ तथा विपश्यनाको फलको रूपमा जान्नु पर्दछ ।" ती दिनहरुमा सबै समाधि संग्रह भएका सबै योगिहरुलाई सधैं अवश्य नै शमथ तथा विपश्यनाको सेवन गर्नु पर्दछ । जस्तो कि त्यही **आर्य सन्धिनिर्मोचन** सूत्रमा भगवान् (बुद्ध) ले यस्तो भन्नु भएको छ कि—"मैले श्रावकहरु, बोधिसत्त्वहरु तथा तथागतका जुन धेरै नै (विभिन्न) समाधिहरुको निर्देश दिएको छ, ती सबै शमथ तथा विपश्यना द्वारा संगृहीत समझनु पर्दछ।"

ཞི་གནས་ཙམ་འབའ་ཞིག་གོམས་པར་བྱས་པས་ནི་རྣལ་འབྱོར་པ་རྣམས་ཀྱི་སྒྲིབ་པ་མི་སྤོང་གི །རེ་ཞིག་ཉོན་མོངས་པ་རྣམ་པར་གནོན་པ་ཙམ་དུ་ཟད་དེ། ཤེས་རབ་ཀྱི་སྣང་བ་བྱུང་བ་མེད་པར་བག་ལ་ཉལ་ལེགས་པར་ཆོམས་མི་སྲིད་པའི་ཕྱིར་བག་ལ་ཉལ་ལེགས་པར་ཆོམས་པར་མི་འགྱུར་རོ། །དེ་བས་ན་**འཕགས་པ་དགོངས་པ་ངེས་པར་འགྲེལ་པ་**དེ་ཉིད་ལས། "བསམ་གཏན་གྱིས་ནི་ཉོན་མོངས་པ་རྣམས

རྣམ་པར་གནོན་ཏོ། །ཤེས་རབ་ཀྱིས་ནི་བག་ལ་ཉལ་ལེགས་པར་འཇོམས་པར་བྱེད་དོ།" ཞེས་བཀའ་བསྩལ་ཏོ།།

केवल शमथ मात्रको भावनाले योगिहरु को आवरणहरु लाई प्रहाण (=त्याग) हुँदैन् केहि समय को लागि क्लेशहरुलाई मात्र दबाएर राख्न सकिन्छ । प्रज्ञाको प्रकाश गरे बिना अनुशय (=गहन अथवा बुरे कर्महरु को त्यो संस्कार जुन सधै साथ रहन्छ) को समुचित रूपले नाश असंभव छ । (प्रज्ञाको बिना त्यो) अनुशयको विनाश हुंदैन यसैले त्यहीं आर्यसन्धिनिर्मोचन (नाम महायान सूत्र) मा भनिएको छ कि—"ध्यान द्वारा क्लेशहरु को निष्क्रमन हुन्छन् । प्रज्ञा द्वारा अनुशय को समुचित रूपले विनाश हुन्छ ।

འཕགས་པ་ཏིང་ངེ་འཛིན་རྒྱལ་པོ་ལས་ཀྱང་།

ཏིང་ངེ་འཛིན་དེ་སྒོམ་པར་བྱེད་མོད་ཀྱི།
དེ་ནི་བདག་ཏུ་འདུ་ཤེས་འཇིག་མི་བྱེད།།
དེ་ནི་ཉོན་མོངས་ཕྱིར་ཞིང་རབ་ཏུ་འཁྲུགས།།
ལྷག་སྤྱོད་འདི་ནི་ཏིང་འཛིན་བསྒོམ་པ་བཞིན།།
གལ་ཏེ་ཆོས་ལ་བདག་མེད་སོ་སོར་རྟོག།
སོ་སོར་དེ་བརྟགས་གལ་ཏེ་བསྒོམ་པ་ནི།།
དེ་ཉིད་མྱ་ངན་འདས་ཐོབ་འབྲས་བུའི་རྒྱུ།།
རྒྱུ་གཞན་གང་ཡིན་དེས་ནི་ཞི་མི་འགྱུར།།

ཞེས་གསུངས་སོ། །**བྱང་ཆུབ་སེམས་པའི་སྡེ་སྣོད་**ལས་ཀྱང་།
"གང་དག་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའི་སྡེ་སྣོད་ཀྱི་ཆོས་ཀྱི་རྣམ་གྲངས་འདི་མ་ཐོས། འཕགས་པའི་ཆོས་འདུལ་བ་མ་ཐོས་པར་ཏིང་ངེ་འཛིན་ཙམ་

གྱིས་ཆོག་པར་འཛིན་པ་ནི་ང་རྒྱལ་གྱི་དབང་གིས་མངོན་པའི་ང་རྒྱལ་དུ་ལྟུང་ཞིང་། སྐྱེ་བ་དང་། རྒ་བ་དང་། ན་བ་དང་། འཆི་བ་དང་། མྱ་ངན་དང་། སྨྲ་སྔགས་འདོན་པ་དང་། སྡུག་བསྔལ་བ་དང་། ཡིད་མི་བདེ་བ་དང་། འཁྲུག་པ་ལས་ཡོངས་སུ་མི་གྲོལ། འགྲོ་བ་དྲུག་གི་འཁོར་བ་ལས་ཡོངས་སུ་མི་གྲོལ། སྡུག་བསྔལ་གྱི་ཕུང་པོ་ལས་ཀྱང་ཡོངས་སུ་མི་གྲོལ་ཏེ། དེ་ལ་དགོངས་ནས་དེ་བཞིན་གཤེགས་པས་འདི་སྐད་ཅེས། གཞན་ལས་རྗེས་སུ་མཐུན་པ་ཐོས་པ་ན་རྒ་ཤི་ལས་གྲོལ་བར་འགྱུར་རོ། ཞེས་བཀའ་བསྩལ་ཏོ།" ཞེས་གསུངས་སོ།།

आर्यसमाधिराजसूत्रमा पनि भनिएको छ—

यो समाधिको भावना भले ही गरुँन,
त्यसबाट आत्म संज्ञा विनाश हुँदैन् ।
त्यसबाट पुनः क्लेश प्रकुपित हुन्छन्,
जस्तो कि उद्रक (रामपुत्र) को समाधि भावना ।।
यदि धर्ममा नैरात्म्यको प्रत्यवेक्षण भएमा,
र त्यसको प्रत्यवेक्षण गरेर यदि भावना गरे ।
त त्यही निर्वाणरूपी फलको प्राप्ति का हेतु हुन् ।
जुन अन्य हेतु छन्, त्यसबाट शान्ति हुँदैन् ।।

बोधिसत्त्व पिटकमा पनि भनिएको छ—"जसले बोधिसत्त्व पिटकको यस धर्म पर्यायलाई सुनेको छैन, (यसैले) आर्य विनय धर्महरु का पनि श्रवण गरेको छैन, तथा जुन समाधि-मात्रले सन्तुष्ट रहन्छन्, त्यो अहंकार को वंशले अभिमानमा पतित हुन्छन्" र त्यो जन्म, बुढ़ापा, रोग, मरण, शोक, विलाप, दुःख, मानसिक पीड़ा तथा कलह (झगड़ा) बाट पूर्णतया मुक्त हुँदैन । षडगति संसारबाट पूर्णतः मुक्त हुँदैन। दुःखस्कन्धबाट पनि पूर्णतः मुक्त हुँदैन । त्यसलाई ध्यानमा

राखेर तथागतले यस प्रकार भनेकोछ कि—'अर्काको अनुरूप श्रवण गर्ने जरामरणबाटह मुक्त हुन्छन्'' यस्तो भन्नु भएको थियो।

དེ་ལྟ་བས་ན་སྒྲིབ་པ་མཐའ་དག་སྤངས་ནས་ཡོངས་སུ་དག་པའི་ཡེ་ཤེས་འབྱུང་བར་འདོད་པས་ཞི་གནས་ལ་གནས་ཤིང་ཤེས་རབ་བསྒོམ་པར་བྱའོ།། དེ་སྐད་དུ། **འཕགས་པ་དཀོན་མཆོག་བརྩེགས་པ་**ལས་ཀྱང་བཀའ་སྩལ་ཏེ།

ཚུལ་ཁྲིམས་ལ་ནི་གནས་ནས་ཏིང་ངེ་འཛིན་ཐོབ་སྟེ།།
ཏིང་ངེ་འཛིན་ཐོབ་ནས་ཀྱང་ཤེས་རབ་སྒོམ་པར་བྱེད།།
ཤེས་རབ་ཀྱིས་ནི་ཡེ་ཤེས་རྣམ་པར་དག་པ་འཐོབ།།
ཡེ་ཤེས་རྣམ་པར་དག་པས་ཚུལ་ཁྲིམས་ཕུན་སུམ་ཚོགས།།

ཞེས་བཀའ་བསྩལ་ཏོ།།

यसैले समग्र आवरणहरुको प्रहाण (=त्याग अथवा छोडेर) गरेर विशुद्ध ज्ञानलाई उत्पन्न गर्ने इच्छा राख्नेहरुलाई शमथमा स्थित भएर प्रज्ञाको भावना गर्नु पर्दछ । यसरी आर्यरत्नकूटमा पनि भनिएका छन् —

''शीलमा स्थित भए पछि समाधि प्राप्त हुन्छन्,
समाधि लाभ भए पछि प्रज्ञाको भावना हुन्छन् ।

प्रज्ञाबाट विशुद्ध ज्ञान प्राप्त हुन्छन्,
(र) विशुद्धज्ञान भए पछि मात्र शील-सम्पत्ति हुन्छन् ।

འཕགས་པ་ཐེག་པ་ཆེན་པོ་ལ་དད་པ་བསྒོམ་པའི་མདོ་ལས་ཀྱང་། "རིགས་ཀྱི་བུ་ཤེས་རབ་ལ་ཉེ་བར་མི་གནས་ན་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའ་རྣམས་ཀྱིས་ཐེག་པ་ཆེན་པོ་ལ་དད་པ་ཐེག་པ་ཆེན་པོ་ལ་ཇི་

ལྟར་ཡང་འབྱུང་བར་ང་མི་སྨྲའོ། རིགས་ཀྱི་བུ་རྣམ་གྲངས་འདིས་ཀྱང་འདི་ལྟར་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའ་རྣམས་ཀྱི་ཐེག་པ་ཆེན་པོ་ལ་དད་པ་ཐེག་པ་ཆེན་པོ་ལ་འབྱུང་བ་གང་ཅི་ཡང་རུང་། དེ་ཐམས་ཅད་ནི་རྣམ་པར་མ་གཡེངས་པའི་སེམས་ཀྱིས་དོན་དང་ཆོས་ཡང་དག་པར་བསམས་པ་ལས་བྱུང་བར་རིག་པར་བྱའོ།" ཞེས་བཀའ་བསྩལ་ཏོ།།

आर्यमहायान-श्रद्धा-भावना सूत्रमा पनि भनिएको छ—
"कुलपुत्र ! प्रज्ञामा स्थित न भएमा बोधिसत्त्वहरुको महायानमा श्रद्धा महायानमा जुन प्रकारले उत्पन्न हुन्छ यो म भन्दिन् । कुलपुत्र ! यीन पर्यायबाट पनि यस प्रकार बोधिसत्त्वहरुको जुन कुनै पनि महायानमा श्रद्धा, महायानमा उत्पन्न हुन्छ, ती सबै अविक्षिप्त (=स्थिर) चित्त द्वारा अर्थ र धर्मको सम्यक् चिन्तनबाट उत्पन्न जानी राखु पर्दछ ।"

ཞི་གནས་དང་བྲལ་བའི་ལྷག་མཐོང་འབའ་ཞིག་གིས་ནི་རྣལ་འབྱོར་པའི་སེམས་ཡུལ་རྣམས་ལ་རྣམ་པར་གཡེང་བར་འགྱུར་གྱི། རླུང་གི་ནང་ན་འདུག་པའི་མར་མེ་བཞིན་དུ་བརྟན་པར་མི་འགྱུར་རོ།། དེ་བས་ན་ཡེ་ཤེས་ཀྱི་སྣང་བ་ཤིན་ཏུ་གསལ་བར་མི་འབྱུང་སྟེ། དེ་ལྟ་བས་ན་གཉིས་ཀ་དང་འདྲ་བར་བསྟེན་པར་བྱའོ། དེའི་ཕྱིར་**འཕགས་པ་ཡོངས་སུ་མྱ་ངན་ལས་འདས་པ་ཆེན་པོའི་མདོ**་ལས་ཀྱང་། "ཉན་ཐོས་རྣམས་ཀྱིས་ནི་དེ་བཞིན་གཤེགས་པའི་རིགས་མི་མཐོང་སྟེ། ཏིང་ངེ་འཛིན་གྱི་ཤས་ཆེ་བའི་ཕྱིར་དང་། ཤེས་རབ་ཆུང་བའི་ཕྱིར་རོ།། བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའ་རྣམས་ཀྱིས་ནི་མཐོང་མོད་ཀྱི་མི་གསལ་ཏེ། ཤེས་རབ་ཀྱི་ཤས་ཆེ་བའི་ཕྱིར་དང་། ཏིང་འཛིན་ཆུང་བའི་ཕྱིར་རོ།། དེ་བཞིན་གཤེགས་པས་ནི་ཐམས་ཅད་གཟིགས་ཏེ།

ཞི་གནས་དང་ལྷག་མཐོང་མཚུངས་པར་ལྡན་པའི་ཕྱིར་རོ།" །ཞེས་བཀའ་སྩལ་ཏོ།

शमथको बिना केवल विपश्यनाले योगी को चित्त विषयहरुमा विक्षिप्त हुन्छन् । हावाको बीचमा स्थित प्रदीपको जस्तै स्थिर हुँदैन । यसैले ज्ञानको प्रकाश अतिस्फुट (अत्यन्त सफा) हुँदैन । अतः दुवैको समान रूपमा सेवन गर्नु पर्दछ । यसैले **आर्यमहापरिनिर्वाणसूत्रमा** पनि भनिएको छ—"श्रावकहरु द्वारा तथागतको गोत्र देख्न सक्दैन, किनकि त्यसमा समाधि अधिक (धेरै) तथा प्रज्ञा अल्प (थोरै) हुन्छन् । बोधिसत्त्वहरुलाई यद्यपि देखिन्छन् , तर अस्पष्ट, किनकि प्रज्ञाको अत्यधिकता र समाधिका अल्पता (कमी) भएको कारण ले हो । तथगातले सबै देख्न, सकिन्छन् किनकि शमथ र विपश्यना दुबै समान रुपमा युक्त छन् ।"

ཞི་གནས་ཀྱི་སྟོབས་ཀྱིས་ནི་མར་མེ་རླུང་གིས་མ་བསྐྱོད་པ་བཞིན་དུ་རྣམ་པར་རྟོག་པའི་རླུང་རྣམས་ཀྱིས་སེམས་གཡོ་བར་མི་འགྱུར་རོ།། ལྷག་མཐོང་གིས་ནི་ལྟ་བ་ངན་པའི་དྲི་མ་མཐའ་དག་སྤངས་པས་གཞན་དག་གིས་མི་ཕྱེད་དོ། །**ཟླ་བ་སྒྲོན་མེའི་མདོ**་ལས་ཇི་སྐད་དུ།

ཞི་གནས་སྟོབས་ཀྱིས་གཡོ་བ་མེད་པར་འགྱུར།།
ལྷག་མཐོང་གིས་ནི་རི་དང་འདྲ་བར་འགྱུར།།

ཞེས་གསུངས་པ་ལྟ་བུའོ། །དེ་ལྟ་བས་ན་གཉིས་ཀ་ལ་རྣལ་འབྱོར་དུ་བྱས་པར་གནས་སོ།།

हावाले न हलाउले दीपक को जस्तै शमथको बलले विकल्प हावा द्वारा चित्त चञ्चल हुँदैन । विपश्यना द्वारा समस्त

कुदृष्टि (रूपी) मलको प्रहाण भए पछि अरुले भेद गर्न सक्दैन। जस्तो कि **चन्द्रप्रदीपसूत्रमा** भनिएको छ—

> शमथको बलबाट अकम्प्य(=अस्थिर न हुनु) हुन्छन्,
> (र) विपश्यनाको बलबाट पर्वत को जस्तै (स्थिर) हुन्छन् ।।''
> यसैले दुवैको योग गरेर स्थित रहनु ।

དེ་ལ་ཐོག་མར་རེ་ཞིག་རྣལ་འབྱོར་པས་གང་གིས་བདེ་བར་མྱུར་དུ་ཞི་གནས་དང་ལྷག་མཐོང་འགྲུབ་པར་འགྱུར་བ་ཞི་གནས་དང་ལྷག་མཐོང་གི་ཚོགས་ལ་ཧེ་བསྟེན་པར་བྱའོ། ། དེ་ལ་ཞི་གནས་ཀྱི་ཚོགས་གང་ཞེ་ན། མཐུན་པའི་ཡུལ་ན་གནས་པ་དང་། འདོད་པ་ཆུང་བ་དང་། ཆོག་ཤེས་པ་དང་། བྱ་བ་མང་པོ་ཡོངས་སུ་སྤངས་པ་དང་། ཚུལ་ཁྲིམས་རྣམ་པར་དག་པ་དང་། འདོད་པ་ལ་སོགས་པའི་རྣམ་པར་རྟོག་པ་ཡོངས་སུ་སྤངས་པའོ།།

यसमा पहिले त्यस योगीलाई सरलता (तथा) छिटै शमथ र विपश्यनाको सिद्धिको लागि शमथ र विपश्यनाका सम्भारको सेवन गुर्न पर्दछ । (त्येसमा शमथ— सम्भार के हुन ? अनुकूल देशमा रहनु, अल्प (थोरै) इच्छा, सन्तोष, धेरै नै कार्यहरुको पूरी तरह त्याग (=बहुकार्यपरित्याग), शीलको परिशुद्धि र इच्छा आदि विकल्पहरुको पूर्ण त्याग गर्नु हो ।

དེ་ལ་ཡོན་ཏན་ལྔ་དག་དང་ལྡན་པ་ནི་མཐུན་པའི་ཡུལ་ཡིན་པར་ཤེས་པར་བྱ་སྟེ། གོས་དང་ཟས་ལ་སོགས་པ་ཚེགས་མེད་པར་རྙེད་པའི་ཕྱིར་**རྙེད་སླ་**བ་དང་། སྐྱེ་བོ་མི་སྡུན་པ་དང་དགྲ་ལ་སོགས་པ་མི་གནས་པའི་ཕྱིར་**གནས་བཟང་**བ་དང་། ནད་མེད་པའི་ས་ཡིན་པས་

ས་བཟང་བ་དང་། གྲོགས་ཚུལ་ཁྲིམས་དང་ལྡན་པ་ལྟ་བ་མཚུངས་པ་ཡིན་པས་**གྲོགས་བཟང་བ་**དང་། ཉིན་མོ་སྐྱེ་བོ་མང་པོ་དག་གིས་མ་གང་བའི་ཕྱིར་དང་། མཚན་མོ་སྒྲ་ཆུང་བའི་ཕྱིར་**ལེགས་པར་ལྡན་**པའོ།།

यसमा पाँच गुणहरुबाट युक्त (देश) लाई अनुकूल देश जान्नु पर्दछ । वस्त्र, भोजन आदि बिना कठिनताले प्राप्त भएको कारणले उनको सुलाभ, दुर्जन, शत्रु आदि का न रहनाले सुस्थान (=राम्रो स्थान), नीरोगी भूमि हुनाले सुभूमि (=राम्रो भूमि), मैत्री शीलबाट युक्त समदृष्टि युक्त सत्त्व भएको हुनाले सुमित्रता (राम्रो मित्र) र दिनमा धेरै जनाले न भरिएको हुनाले तथा रातमा अल्प शब्द (=कम आवाज) भएको हुनाले (यस्तो स्थान राम्रो गुणयुक्त देश) सुयुक्त भनिन्छन् ।

འདོད་པ་ཆུང་བ་གང་ཞི་ན། ཆོས་གོས་ལ་སོགས་པ་བཟང་པོའམ་མང་པོ་ལ་ལྷག་པར་ཆགས་པ་མེད་པའོ། །ཆོག་ཤེས་པ་གང་ཞི་ན། ཆོས་གོས་ལ་སོགས་པ་ངན་ངོན་ཙམ་རྙེད་པས་རྟག་ཏུ་ཆོག་ཤེས་པ་གང་ཡིན་པའོ། །བྱ་བ་མང་པོ་ཡོངས་སུ་སྤྱངས་པ་གང་ཞི་ན། ཉོ་ཚོང་ལ་སོགས་པ་ལས་ངན་པ་ཡོངས་སུ་སྤང་བ་དང་། ཁྱིམ་པ་དང་རབ་ཏུ་བྱུང་བ་གང་དག་ཏ་ཅང་སློས་འདྲིན་བྱེད་པ་ཡོངས་སུ་སྤང་བ་དང་། སྨན་བྱེད་པ་སྐར་མ་རྩི་བ་ལ་སོགས་པ་ཡོངས་སུ་སྤྱངས་པ་གང་ཡིན་པའོ།།

अल्प (थोरै) इच्छा के हो ? चीवर आदि को उत्कृष्टता वा अधिकता को कामना न गर्नु । सन्तुष्टि के हो ? केवल साधारण चीवर आदि को प्राप्ति ले सधैं सन्तोष हुनु । बहुकार्यका परित्याग के हुन ? किन्नु-बेच्नु आदि दुष्कर्म (कामहरु) को पूर्ण त्याग, गृहस्थ तथा प्रब्रजितको (एक अर्का

संग) धेरै कुरा गर्नु र प्रशंसाको पूर्ण त्याग गर्नु, औषधि-बनाउनु तथा नक्षत्रगणना (ज्योतिष) आदि कामहरु को पूर्णत्याग गर्नु पर्दछ ।

ཚུལ་ཁྲིམས་རྣམ་པར་དག་པ་གང་ཞེ་ན། སྡོམ་པ་གཉིས་ཀ་ལ་ཡང་རང་བཞིན་དང་བཅས་པའི་ཁ་ན་མ་ཐོ་བ་དང་བཅས་པའི་བསླབ་པའི་གཞི་མི་འདྲལ་བ་དང་། བག་མེད་པར་རལ་ན་ཡང་སྐྱེན་པ་སྐྱེན་པར་འགྱོད་པས་ཆོས་བཞིན་དུ་བྱེད་པ་དང་། ཉན་ཐོས་ཀྱི་སྡོམ་པ་ལ་ཕམ་པ་བཅོས་སུ་མི་རུང་བར་གསུངས་པ་གང་ཡིན་པ་དེ་ལ་ཡང་འགྱོད་པ་དང་ལྡན་པ་དང་། ཕྱིས་མི་བྱ་བའི་སེམས་དང་ལྡན་པ་དང་། སེམས་གང་གིས་ལས་དེ་བྱས་པའི་སེམས་དེ་ལ་ངོ་བོ་ཉིད་མེད་པར་སོ་སོར་རྟོག་པའི་ཕྱིར་རམ། ཆོས་ཐམས་ཅད་ངོ་བོ་ཉིད་མེད་པར་གོམས་པའི་ཕྱིར་དེའི་ཚུལ་ཁྲིམས་རྣམ་པར་དག་པ་ཁོ་ན་ཡིན་པར་བརྗོད་པར་བྱའོ།། དེ་ནི་**འཕགས་པ་མ་སྐྱེས་དགྲའི་འགྱོད་པ་བསལ་བ**་ལས་ཁོང་དུ་ཆུད་པར་རིག་པར་བྱའོ།། དེ་བས་ན་དེ་འགྱོད་པ་མེད་པར་བྱས་ལ་སྒོམ་པ་ལ་མངོན་པར་བརྩོན་པར་བྱའོ།།

शील विशुद्धि के हुन ? दुवै संवरहरुमा पनि प्रकृति (सावद्य) र प्रतिक्षेपसावद्य शिक्षाको आधार को भङ्ग न हुनु तथा प्रमाद (=असावधानी अथवा अवहेलना) बाट भङ्ग भए पछि छिटो भन्दा छिटो पश्चाताप द्वारा धर्मको अनुसार गर्नु, श्रावक-संवरमा जुन पाराजिकाहरु को प्रतिविधानमा अयोग्य भनिएको छ, त्यसमा पनि पश्चातापले युक्त भएको र पछि (=भविष्य) न गर्ने को प्रतिज्ञा द्वारा तथा जुन चित्तले त्यो कर्मलाई गरेछन्, त्यस चित्तमा नि:स्वभावता (स्वभाव ले छैन) को प्रत्यवेक्षण (प्रति-बोध) वा सबै धर्महरुमा नि:स्वभावता-

को भावना गर्नाले त्यसको शील विशुद्धि नै भनिन्छ । उसले **आर्य अजातशत्रुकौकृत्यविनोदन सूत्र** भनेर जान्नु पर्दछ । यसैले पश्चाताप रहित भएर भावनामा प्रयत्न गर्नु पर्दछ ।

འདོད་པ་རྣམས་ལ་ཡང་ཚེ་འདི་དང་ཚེ་ཕྱི་མ་ལ་ཉེས་དམིགས་རྣམ་པ་མང་པོར་འགྱུར་བར་ཡིད་ལ་བྱས་ལ་དེ་དག་ལ་རྣམ་པར་རྟོག་པ་སྤང་བར་བྱའོ།། རྣམ་པ་གཅིག་ཏུ་ན་འཁོར་བ་པའི་དངོས་པོ་སྡུག་པའམ་མི་སྡུག་པ་ཡང་རུང་སྟེ། དེ་དག་ཐམས་ཅད་ནི་རྣམ་པར་འཇིག་པའི་ཆོས་ཅན་མི་བརྟན་པ་སྟེ། གདོན་མི་ཟ་བར་དེ་དག་ཐམས་ཅད་དང་བདག་རིང་པོར་མི་ཐོགས་པར་འབྲལ་བར་འགྱུར་ན! བདག་དེ་ལ་ཅི་ཞིག་ལྷག་པར་ཆགས་པ་ལ་སོགས་པར་འགྱུར་སྙམ་དུ་བསྒོམས་པས་རྣམ་པར་རྟོག་པ་ཐམས་ཅད་སྤང་བར་བྱའོ།།

कामहरुमा पनि यो जन्म पर (अर्को) जन्ममा हुने अनेक प्रकारको दोषहरुलाई मनमा राखेर ती (कामहरु) को विकल्पहरुलाई त्याग्नु पर्दछ । एक प्रकारले संसार का वस्तुहरु प्रिय वा अप्रिय चाहे जुनसुकै होस् ती सबै विनाश धर्म भएको (एवं) अस्थिर छन् । यसमा संदेह छैन् । ती सबै मा र म मा (परस्पर) शीघ्र (छिटो) वियोग (=छुटकारा) हुने छन् त म किन अधिक आसक्ति गरुँ, यस्तो भावना गरेर सबै विकल्पहरुको प्रहाण (=त्याग) गर्नु पर्दछ ।

ལྷག་མཐོང་གི་ཚོགས་གང་ཞེ་ན། སྐྱེས་བུ་དམ་པ་ལ་བརྟེན་པ་དང་། མང་དུ་ཐོས་པ་ཡོངས་སུ་བཙལ་བ་དང་། ཚུལ་བཞིན་སེམས་དཔའོ། །དེ་ལ་སྐྱེས་བུ་དམ་པ་ཇི་ལྟ་བུ་ལ་བརྟེན་པར་བྱ་ཞེ་ན།

གང་མང་དུ་ཐོས་པ་དང་། ཚིག་གསལ་བ་དང་། སྙིང་རྗེ་དང་ལྡན་པ་དང་། སྙུ་བ་བཟོད་པའོ།།

विपश्यनाको संभार के हुन ? सत्पुरुषहरुको आश्रय, बहुश्रुतहरुको अन्वेषण र योनिशोमनसिकार (यी तीन) हुन् । त्यसमा कुन किसिमको सत्पुरुष को आश्रय (=सहारा) लिनु पर्दछ ? जुन बहुश्रुत (=जसले धर्म धेरै सुनेको छ) स्पष्टभाषी (=स्पष्ट अथवा साफ बोल्नें व्यक्ति), करुणाले युक्त तथा दुःख सहिष्णु (=दुःखलाई सहने व्यक्ति) हुन । यस्तो पुरुषको आश्रय लिनु पर्दछ ।

དེ་ལ་མང་དུ་ཐོས་པ་ཡོངས་སུ་བཙལ་བ་གང་ཞེ་ན། གང་བཅོམ་ལྡན་འདས་ཀྱི་གསུང་རབ་ཡན་ལག་བཅུ་གཉིས་པོ་ངེས་པའི་དོན་དང་དྲང་བའི་དོན་ལ་གུས་པར་བྱས་ཤིང་ཉན་ཏུ་ཉན་པ་སྟེ། འདི་ལྟར་**འཕགས་པ་དགོངས་པ་ངེས་པར་འགྲེལ་བ**་ལས། "འཕགས་པའི་གདམ་འདོད་པ་བཞིན་དུ་མ་ཐོས་པ་ནི་ལྷག་མཐོང་གི་གེགས་ཡིན་ནོ།།" ཞེས་བཀའ་སྩལ་ཏོ། དེ་ཉིད་ལས། "ལྷག་མཐོང་ནི་ཐོས་པ་དང་བསམས་པ་ལས་བྱུང་བའི་ལྟ་བ་རྣམ་པར་དག་པའི་རྒྱུ་ལས་བྱུང་བ་ཡིན་ནོ།།" ཞེས་གསུངས་སོ། །**འཕགས་པ་སྒྲིད་མེད་ཀྱི་ཞུས་ཞུས་པ**་ལས་ཀྱང་། "ཐོས་པ་དང་ལྡན་པ་ནི་ཤེས་རབ་འབྱུང་བར་འགྱུར་རོ།། ཤེས་རབ་དང་ལྡན་པ་ནི་ཉོན་མོངས་པ་རབ་ཏུ་ཞི་བར་འགྱུར་རོ།།" ཞེས་བཀའ་སྩལ་ཏོ།།

त्यसमा बहुश्रुत अन्वेषण के हुन ? जुन भगवान् बुद्धको बाहर अङ्ग भएको धर्म प्रवचनको नेयार्थ र नीतार्थ को आदरपूर्वक श्रवण गर्दछन् । यस प्रकार **आर्यसंधिनिर्मोचन**

(नाम महायान सूत्र) मा भनिएका छन्—"इच्छाको अनुसार आर्य-कथालाई न सुन्नु विपश्यना को विघ्न (=बाधा वा रुकावट) हुन् । (=यथेच्छम् आर्याख्यानाश्रवणं हि विपश्यनाविघ्नः ।") त्यसैमा भनिएको छ—"विपश्यना त श्रवण र मनन (चिन्तन) बाट उत्पन्न विशुद्ध दृष्टिको कारण उत्पन्न हुन्छन् ।" **आर्यनारायणपरिपृच्छा सूत्र** मा पनि—"श्रवणवानमा प्रज्ञा उत्पन्न हुन्छ । प्रज्ञावान का क्लेश शान्त हुन्छन् ।" यस्तो भगवान् बुद्धले भन्नु भएको थियो ।

ཚུལ་བཞིན་བསམ་པ་གང་ཞེ་ན། གང་ངེས་པའི་དོན་གྱི་མདོ་སྡེ་དང་དྲང་བའི་དོན་གྱི་མདོ་སྡེ་ལ་སོགས་པ་ལེགས་པར་གཏན་ལ་འབེབས་པ་སྟེ། དེ་ལྟར་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའ་ཐེ་ཚོམ་མེད་ན་བསྒོམ་པ་ལ་གཅིག་ཏུ་ངེས་པར་འགྱུར་རོ།། དེ་ལྟ་མ་ཡིན་ན་ཐེ་ཚོམ་གྱིས་འཕྱང་མོ་ཉུག་པའི་ཐེག་པ་ལ་འདུག་པ་ནི་ལམ་ཁ་བྲག་གི་མདོར་ཕྱིན་པའི་མི་ལྟར་གང་དུ་ཡང་གཅིག་ཏུ་ངེས་པར་མི་འགྱུར་རོ།།

योनिशोमनसिकार के हुन ? जसलाई (जुन) नीतार्थ सूत्र र नेयार्थ सूत्र आदि सुनिर्णीत गर्दछन् । यसरी बोधिसत्त्वलाई शंका नभए पछि भावनामा एकान्त निश्चय हुन्छन् । अन्यथा संशयमा डगमगाइ रहेको यानमा स्थित रहेता पनि चौबाटोमा पुगेका व्यक्तिले जस्तै कुनै ठाऊँ मा पनि निश्चय गर्न सक्ने छैन।

རྣལ་འབྱོར་པས་ནི་དུས་ཐམས་ཅད་དུ་ཉ་དང་ཤ་ལ་སོགས་པ་སྤང་ཞིང་མི་མཐུན་པ་མ་ཡིན་པ་དང་། ཟས་ཚོད་ཟིན་པར་བཟའ་བར་བྱའོ། །དེ་ལྟར་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའ་ཞི་གནས་དང་ལྷག་མཐོང་གི་ཚོགས་མཐའ་དག་བསགས་པ་དེས་བསྒོམ་པ་ལ་འཇུག་པར་བྱའོ།།

योगीले सधैं माछा, मासु आदि लाई छोडेर, अप्रतिकुल तथा सीमित मात्रामा भोजन गर्नु पर्दछ । यसरी जुन बोधिसत्त्वले शमथ एवं विपश्यनाको सम्पूर्ण सम्भारहरुलाई सञ्चित गरेका छन्, त्यसले भावनामा प्रवेश गर्नु पर्दछ ।

དེ་ལ་རྣལ་འབྱོར་པས་སྒོམ་པའི་དུས་ན་ཐོག་མར་བྱ་བ་ཅི་ཡོད་པ་ཐམས་ཅད་ཡོངས་སུ་རྫོགས་པར་བྱས་ལ། བཤང་གཅི་བྱས་ནས་སྒྲའི་ཚེར་མ་མེད་པ་ཡིད་དུ་འོང་བའི་ཕྱོགས་སུ་བདག་གིས་སེམས་ཅན་ཐམས་ཅད་བྱང་ཆུབ་ཀྱི་སྙིང་པོ་ལ་དགོད་པར་བྱའོ་སྙམ་དུ་བསམ་ཞིང་། འགྲོ་བ་མཐའ་དག་མངོན་པར་གདོན་པའི་བསམ་པ་ཅན་གྱི་སྙིང་རྗེ་ཆེན་པོ་མངོན་དུ་བྱས་ལ། ཕྱོགས་བཅུ་ན་བཞུགས་པའི་སངས་རྒྱས་དང་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའ་ཐམས་ཅད་ལ་ཡན་ལག་ལྔས་ཕྱག་བྱས་ནས། སངས་རྒྱས་དང་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའི་སྐུ་གཟུགས་རི་མོ་ལ་སོགས་པ་མདུན་དུ་བཞག་གམ་གཞན་དུ་ཡང་རུང་སྟེ། དེ་དག་ལ་ཅི་ནུས་ཀྱིས་མཆོད་པ་དང་བསྟོད་པ་བྱས་ལ་རང་གི་སྡིག་པ་བཤགས་ནས་འགྲོ་བ་མཐའ་དག་གི་བསོད་ནམས་ལ་རྗེས་སུ་ཡི་རང་བར་བྱས་ལ། སྟན་ཤིན་ཏུ་འཇམ་པོ་བདེ་བ་ལ་རྗེ་བཙུན་རྣམ་པར་སྣང་མཛད་ཀྱི་སྐྱིལ་མོ་ཀྲུང་ལྟ་བུའམ། སྐྱིལ་མོ་ཀྲུང་ཕྱེད་དུ་ཡང་རུང་སྟེ། མིག་ཧ་ཅང་ཡང་མི་དབྱེ། ཧ་ཅང་ཡང་མི་གཟུམ་པར་སྣའི་རྩེ་མོར་གཏད་ཅིང་། ལུས་ཧ་ཅང་ཡང་མི་སྒུ། ཧ་ཅང་ཡང་མི་དགྱེ་བར་དྲང་པོར་བསྲངས་ལ་དྲན་པ་ནང་དུ་བཞག་སྟེ་འདུག་པར་བྱའོ།།

त्यहाँ सर्वप्रथम योगीले भावना गर्दा खेरी सबै आवश्यक कार्य समाप्त गरेर, मल–मूत्र त्याग गरेर, कठोर (कटु वचन) आवाज आदि बाट टाढा, मनको अनुकुल स्थानमा स्थित भएर

मैले सबै सत्त्वहरूलाई बोधिमण्डपमा स्थापित गर्नु छ, यस्तो सोच्दै समस्त जगतको उद्धारको विचारले युक्त भएर महाकरुणालाई अगाडि राखेर दसै दिशाहरूमा स्थित सबै बुद्धहरू तथा बोधिसत्त्वहरूलाई पाँचै अँगहरूबाट प्रणाम गरेर बुद्ध तथा बोधिसत्त्वहरूको मूर्त्ति-चित्र आदि लाई अगाडि राखेर अथवा अन्य कुनै (वस्तु) मा स्थापित गरेर त्यसको यथा संभव (जति सकिन्छ) पूजा र स्तुति गरेर, आफ्नो पापहरूको प्रायश्चित गरेर समस्त जगतको पुण्यहरूको अनुमोदन गरेर, अतिमृदु सुखासनमा भट्टारक (पूज्य) वैरोचनको पर्यङ्क (समाधि अवस्थामा बस्ने विशेष विधि) को जस्तै अर्धपर्यङ्क गरेर, आँखलाई न त धेरै खोलेर, र न धैरै बन्द गरेर, नाकको अधिल्लो भागमा (दुवै आँखा) लाई टिकाएर, शरीर लाई न धैरै झुकाएर, न धैरै तानेर, सीधा प्रणिधान गरेर, स्मृतिलाई भित्र तरफ मोडिएर (योगी ले समाधि मा) बस्नु पर्दछ ।

དེ་ནས་ཕྲག་པ་མཉམ་པར་བཞག་ལ་མགོ་མི་མཐོ་མི་དམའ་ཞིང་ཕྱོགས་གཅིག་ཏུ་མ་ཡོ་བར་བཞག་སྟེ། སྣ་ནས་ལྟེ་བའི་བར་དྲང་པོར་བཞག་གོ །སོ་དང་མཆུ་ཡང་ཐ་མལ་པར་བཞག་གོ །ལྕེ་ཡང་ཡ་སོའི་དྲུང་དུ་གཞར་རོ། །དབུགས་ཕྱི་ནང་དུ་རྒྱུ་བ་ཡང་སྒྲ་ཅན་དང་། རྔམས་པ་ཅན་དང་། དབུགས་ཧོད་པ་ཅན་དུ་མི་བཏང་ངོ་ །ཅི་ནས་ཀྱང་མི་ཚོར་བར་དལ་བུ་དལ་བུས་ལྷན་གྱིས་གྲུབ་པའི་ཚུལ་གྱིས་དབུགས་ནང་དུ་རྔུབ་པ་དང་ཕྱིར་འབྱུང་བ་དེ་ལྟར་བྱའོ།།

यस पछि दुवै कन्धालाई बराबर स्थापित गर्नु । टाउको लाई न धैरै माथि, र न धेरै तल झुकाएर एक दिशामा न हिलाईकन (निश्चल) राख्नु पर्दछ । नाकबाट नाइटो (नाभि) सम्म एकदम सीधा राख्नु पर्दछ । दाँत र ओंठलाई कोमल पारेर राख्नु पर्दछ र जिब्रालाई माथि को दाँतहरूको जड़मा

लगाएर राख्नु पर्दछ । श्वांसलाई भित्र-बाहिर लै जादा खेरी बिना आवाजले, न विस्तारै न तेज गर्नु हुँदैन, मध्यम बनाएर राख्नु पर्दछ, कुनै प्रकारले बिना जानी विस्तारै विस्तारै अनायास नै श्वांस भित्र-बाहिर निकाल्नु यस्तो गर्नु पर्दछ ।

དེ་ལ་ཐོག་མར་རེ་ཞིག་ཞི་གནས་བསྒྲུབ་པར་བྱ་སྟེ། ཕྱི་རོལ་གྱི་ཡུལ་ལ་རྣམ་པར་གཡེང་བ་ཞི་ནས་ནང་དུ་དམིགས་པ་ལ་རྒྱུན་དུ་རང་གི་ངང་གིས་འཇུག་ལ། དགའ་བ་དང་ཤིན་ཏུ་སྦྱངས་པ་དང་ལྡན་པའི་སེམས་ཉིད་ལ་གནས་པ་ནི་ཞི་གནས་ཞེས་བྱའོ། །ཞི་གནས་དེ་ཉིད་ལ་དམིགས་པའི་ཚེ་དེ་ཁོ་ན་ལ་རྣམ་པར་དཔྱོད་པ་གང་ཡིན་པ་དེ་ནི་ལྷག་མཐོང་ཡིན་ཏེ། **འཕགས་པ་དཀོན་མཆོག་སྤྲིན**་ལས་ཇི་སྐད་དུ། "ཞི་གནས་ནི་སེམས་རྩེ་གཅིག་པ་ཉིད་དོ། །ལྷག་མཐོང་ནི་ཡང་དག་པར་སོ་སོར་རྟོག་པའོ།" །ཞེས་གསུངས་པ་ལྟ་བུའོ།།

त्यहाँ सबैभन्दा पहिले शमथ सिद्ध गर्नु पर्दछ । बाह्य विषयहरूमा हुने चित्त विक्षेपलाई शान्त गरेर आभ्यान्तरमा (भित्रपट्टि सम्म) आलम्बन (आश्रय; सहारा:) लाई निरन्तर अनायास प्रवृत्त गरेर प्रीति तथा प्रस्रब्धिलाई चित्तमा स्थित हुनु ''शमथ'' भनिन्छन् । त्यही शमथलाई आलम्बन गर्दा खेरी जुन तत्त्व-विचार छन् त्यही ''विपश्यना'' हुन । जस्तो कि **आर्यरत्नमेघ** मा भनिएको छ—''शमथ चित्तको एकाग्रता हुन र विपश्यना सम्यक् प्रत्यवेक्षण हुन ।''

འཕགས་པ་དགོངས་པ་ངེས་པར་འགྲེལ་པ་ལས་ཀྱང་། "བཅོམ་ལྡན་འདས། ཇི་ལྟར་ཞི་གནས་ཡོངས་སུ་ཚོལ་བར་བགྱིད་པ་དང་། ལྷག་མཐོང་ལ་མཁས་པ་ལགས། བཀའ་སྩལ་པ། བྱམས་པ་ངས་ཆོས་གདགས་པ་རྣམ་པར་གཞག་པ་འདི་ལྟ་སྟེ། མདོའི་

སྡེ་དང་། དབྱངས་ཀྱིས་བསྙད་པའི་སྡེ་དང་། ལུང་དུ་བསྟན་པའི་སྡེ་དང་། ཚིགས་སུ་བཅད་པའི་སྡེ་དང་། ཆེད་དུ་བརྗོད་པའི་སྡེ་དང་། གླེང་གཞིའི་སྡེ་དང་། རྟོགས་པ་བརྗོད་པའི་སྡེ་དང་། དེ་ལྟ་བུ་བྱུང་བའི་སྡེ་དང་། སྐྱེས་པ་རབས་ཀྱི་སྡེ་དང་། ཤིན་ཏུ་རྒྱས་པའི་སྡེ་དང་། རྨད་དུ་བྱུང་བའི་ཆོས་ཀྱི་སྡེ་དང་། གཏན་ལ་ཕབ་པར་བསྟན་པའི་སྡེ་གང་དག་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའ་རྣམས་ལ་བཤད་པ་དེ་དག་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔས་ལེགས་པར་ཐོས། ལེགས་པར་གཟུང་། ཁ་ཏོན་བྱང་བར་བྱས། ཡིད་ཀྱིས་ལེགས་པར་བརྟགས། མཐོང་བས་ཤིན་ཏུ་རྟོགས་པར་བྱས་ནས་དེ་གཅིག་པུ་དབེན་པར་འདུག་སྟེ་ནང་དུ་ཡང་དག་བཞག་ནས་ཇི་ལྟར་ལེགས་པར་བསམས་པའི་ཆོས་དེ་དག་ཉིད་ཡིད་ལ་བྱེད་ཅིང་སེམས་གང་གིས་ཡིད་ལ་བྱེད་པའི་སེམས་དེ་ནང་དུ་རྒྱུན་ཆགས་སུ་ཡིད་ལ་བྱེད་པས་ཡིད་ལ་བྱེད་དོ། །དེ་ལྟར་ཞུགས་ཤིང་དེ་ལ་ལན་མང་དུ་གནས་པ་དེ་ལས་ལུས་ཤིན་ཏུ་སྦྱངས་པ་དང་སེམས་ཤིན་ཏུ་སྦྱངས་པ་འབྱུང་བ་གང་ཡིན་པ་དེ་ནི་**ཞི་གནས**་ཞེས་བྱ་སྟེ། དེ་ལྟར་ན་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའ་ཞི་གནས་ཡོངས་སུ་ཚོལ་བར་བྱེད་པ་ཡིན་ནོ། །

དེས་ལུས་ཤིན་ཏུ་སྦྱངས་པ་དང་། སེམས་ཤིན་ཏུ་སྦྱངས་པ་དེ་ཐོབ་ནས་དེ་ཉིད་ལ་གནས་ཏེ། སེམས་ཀྱི་རྣམ་པར་གཡེང་བ་སྤངས་ནས་ཇི་ལྟར་བསམས་པའི་ཆོས་དེ་དག་ཉིད་ནང་དུ་ཏིང་ངེ་འཛིན་གྱི་སྤྱོད་ཡུལ་གཟུགས་བརྙན་དུ་སོ་སོར་རྟོག་པ་བྱེད། མོས་པར་བྱེད་དོ། །དེ་ལྟར་ཏིང་ངེ་འཛིན་གྱི་སྤྱོད་ཡུལ་གཟུགས་བརྙན་དེ་དག་ལ་ཤེས་བྱའི་དོན་དེ་རྣམ་པར་འབྱེད་པ་དང་། རབ་ཏུ་རྣམ་པར་འབྱེད་པ་དང་། ཡོངས་

སུ་རྟོག་པ་དང་། ཡོངས་སུ་དཔྱོད་པ་དང་། བཟོད་པ་དང་།
འདོད་པ་དང་། བྱེ་བྲག་འབྱེད་པ་དང་། ལྟ་བ་དང་། རྟོག་པ་
གང་ཡིན་པ་དེ་ནི་**ལྷག་མཐོང**་ཞེས་བྱ་སྟེ། དེ་ལྟར་ན་བྱང་ཆུབ་སེམས་
དཔའ་ལྷག་མཐོང་ལ་མཁས་པ་ཡིན་ནོ།" །ཞེས་གསུངས་སོ།།

आर्यसंधिनिर्मोचन (नाम महायान सूत्र) मा पनि भनिएको छ—"भगवन् ! शमथको पूर्ण खोज तथा विपश्यनामा निपुण कसरी प्राप्त हुन्छन् ? (बुद्ध) भन्दछन्—मैत्रेय ! म बाट धर्मोपचारको व्यवस्था यस प्रकार छ जुन सूत्रवर्ग, गेयवर्ग (गाउन मा योग्य) व्याकरणवर्ग, गाथावर्ग, उदानवर्ग, निदानवर्ग, अवदानवर्ग, इतिवृत्तकवर्ग जातकवर्ग, वैपुल्यवर्ग, अद्भूतधर्मवर्ग तथा उपदेशवर्ग जुन बोधिसत्त्वहरूलाई बताएको थियो, ती सबै बोधिसत्त्वहरूले सम्यक् (राम्ररी) रूपमा श्रवण गरेर, सम्यक् रूपले धारण गरेर, पाठ को अभ्यास गरेर, मनले सम्यक् रूपमा परीक्षण गरेर, हेरेर (दृष्टि ले) अत्यन्त बोध गर्नु । एकलै एकान्त स्थानमा बसेर, अभ्यन्तरमा सुस्थित भएर जसरी समुचित (सु-विचारित) रूपले विचारित छन् ती नै धर्महरुको मनसिकार गरेर, जुन चित्त द्वारा मनसिकार हुन्छन् त्यही चित्तको अभ्यन्तरमा सधैं चिन्तन द्वारा मनसिकार हुन्छन् । यसरी प्रवेश गरेर त्यसमा अनेक पटक स्थित भएर, त्यसमा जुन काय प्रश्रब्धि र चित्त-प्रश्रब्धि हुन्छन, त्यसैलाई 'शमथ' भन्दछन् । यसैले बोधिसत्त्व शमथको परि-गवेषण (पूर्ण-खोज) गर्दछ । यसबाट काय प्रश्रब्धि तथा चित्त-प्रश्रब्धि हुन्छन् । त्यसलाई प्राप्त गरेर त्यसैमा स्थित हुन्छन्, र चित्त विक्षेपको प्रहाण गरेर प्रशान्त चिन्तन गरेका ती नै धर्महरूको भित्रमा समाधि-गोचर, प्रतिबिम्बको रूपमा प्रत्यवेक्षण गर्दछ र अधिमुक्त गर्दछन् । त्यसप्रकारको समाधि गोचर ती प्रतिबिम्वहरू मा त्यस ज्ञेयार्थको विवेचन, प्रतिविवेचन, परिकल्पना, पर्यवेक्षणा, क्षान्ति, इच्छा, विशिष्टविभाग, दर्शन तथा अधिगम गर्दछन्, त्यसैलाई विपश्यना

भन्दछन् र त्यसरी नै बोधिसत्त्वको विपश्यनामा कुशलता हुन्छन् ।''

དེ་ལ་རྣལ་འབྱོར་པ་ཞི་གནས་མངོན་པར་བསྒྲུབ་པར་འདོད་པས་ ཐོག་མར་རེ་ཞིག་མདོའི་སྡེ་དང་། དབྱངས་ཀྱིས་བསྙད་པའི་སྡེ་ལ་ སོགས་པ་གསུང་རབ་མཐའ་དག་ནི་དེ་བཞིན་ཉིད་ལ་གཞོལ་བ། དེ་ བཞིན་ཉིད་ལ་བབ་པ། དེ་བཞིན་ཉིད་ལ་འབབ་པའོ་ཞེས་ཐམས་ཅད་ བསྡུས་ཏེ་དེ་ལ་སེམས་ཉེ་བར་བཞག་པར་བྱའོ།། རྣམ་པ་གཅིག་ཏུ་ན་ རྣམ་པ་ཇི་ཙམ་གྱིས་ཆོས་ཐམས་ཅད་བསྡུས་པར་གྱུར་པ་ཕུང་པོ་ལ་སོགས་ པ་དེ་ལ་སེམས་ཉེ་བར་བཞག་པར་བྱའོ། །རྣམ་པ་གཅིག་ཏུ་ན་ཇི་ལྟར་ མཐོང་བ་དང་། ཇི་ལྟར་ཐོས་པའི་སངས་རྒྱས་ཀྱི་སྐུ་གཟུགས་ལ་སེམས་ གཞག་པར་བྱ་སྟེ། **འཕགས་པ་ཏིང་ངེ་འཛིན་གྱི་རྒྱལ་པོ་**ལས་ཇི་ སྐད་དུ།

གསེར་གྱི་ཁ་དོག་ལྟ་བུའི་སྐུ་ལུས་ཀྱིས།།
འཇིག་རྟེན་མགོན་པོ་ཀུན་ཏུ་མཛེས་པ་སྟེ།།
དམིགས་པ་དེ་ལ་གང་གིས་སེམས་འཇུག་པ།།
བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའ་དེ་མཉམ་བཞག་ཅེས་བྱ།།

ཞེས་གསུངས་པ་ལྟ་བུའོ།།

त्यहाँ शमथलाई अभिनिर्हार (पूर्ति) गर्ने इच्छुक योगीलाई शुरूमा त सूत्रवर्ग, गेयवर्ग आदि को समस्त प्रवचन तथतापरायणता, तथतामा उत्रिनु, तथताको तरफ आउनु, यस प्रकारको सबै संग्रह गरेर त्यसमा चित्तलाई उपस्थापित गर्नु पर्दछ। अथवा त्यहाँ कति आकारहरूमा सबै धर्महरूको संग्रहीत गरेर स्कन्ध आदि मा चित्तलाई उपस्थापित गर्नु पर्दछ,

वा एक प्रकारले जस्तो देख्यो र जस्तो सुनी राखेको थियो (त्यही) बुद्धको मूर्तिमा चित्तलाई स्थापित गर्नु पर्दछ । किनकि **आर्यसमाधिराजसूत्रमा** यस प्रकार भनिएको छ—

> "सुवर्ण वर्णको समान शरीरले,
> लोकनाथ (बुद्ध) सबै स्थानमा सुशोभित छन् ।
> त्यस आलम्बनमा जसको चित्त प्रवृत्त हुन्छन,
> त्यो बोधिसत्त्व त्यसमा समाहित छ भनिन्छन् ।

དེ་ལྟར་གང་ལ་འདོད་པའི་དམིགས་པ་དེ་ལ་སེམས་བཞག་ནས་དེ་ཉིད་ལ་ཕྱིར་ཞིང་རྒྱུན་དུ་སེམས་བཞག་པར་བྱའོ། །དེ་ལ་ཉེ་བར་བཞག་ནས་སེམས་ལ་འདི་ལྟར་དཔྱད་པར་བྱ་སྟེ། ཅི་དམིགས་པ་ལེགས་པར་འཛིན་ཏམ། འོན་ཏེ་བྱིང་ངམ། འོན་ཏེ་ཕྱི་རོལ་གྱི་ཡུལ་ལ་རྣམ་པར་འཕྲོར་བས་རྣམ་པར་གཡེངས་སམ་སྙམ་དུ་བརྟག་པར་བྱའོ། །དེ་ལ་གལ་ཏེ་རྨུགས་པ་དང་གཉིད་ཀྱིས་ནོན་ནས་སེམས་བྱིང་ངམ། བྱིང་དུ་དོགས་པ་མཐོང་བ་དེའི་ཚེ། མཆོག་ཏུ་དགའ་བའི་དངོས་པོ་སངས་རྒྱས་ཀྱི་སྐུ་གཟུགས་ལ་སོཏ་པའམ། སྣང་བའི་འདུ་ཤེས་ཡིད་ལ་བྱའོ། །དེ་ནས་བྱིང་བ་ཞི་བར་བྱས་ནས་ཅི་ནས་ཀྱང་དམིགས་པ་དེ་ཉིད་ལ་སེམས་ཀྱིས་དམིགས་པ་ཤིན་ཏུ་གསལ་བར་མཐོང་བར་གྱུར་པ་དེ་ལྟར་བྱའོ།།

यसरी जसमा इच्छा छ, त्यस आलम्बनमा चित्त स्थापित गरेर त्यसैमा उत्तरोत्तर सधै चित्तलाई स्थापित गर्नु पर्दछ । त्यसमा उपस्थापित गरेर यसरी चित्तको परीक्षण गर्नु पर्दछ कि के आलम्बन सम्यक् रूपले ग्रहण गर्दछन् अथवा लीन हुन्छन्, वा बाह्य विषयमा आसक्त भएमा विक्षिप्त हुन्छन् । यस्तो परीक्षा गर्नु पर्दछ । यसमा यदि स्त्यान अथवा मिद्धबाट अभिभूत भएर

चित्त लीन रहनु अथवा लीन (मग्न) भएको शङ्का दिखाई दिए, त्यही समय परम आनन्द दिने वस्तु बुद्धको मूर्ति (प्रतिमा) आदि वा आलोक संज्ञा भएको मनसिकार गर्नुपर्दछ । यस पछि लयलाई शान्त गरेर कुनै पनि प्रकारले त्यही आलम्बन चित्तको आलम्बन (ध्यान गर्ने विषय) अत्यन्त स्पष्ट दिखाई दिने, त्यही प्रकारले गर्नु पर्दछ ।

གང་གི་ཚེ་དམུས་ལོང་ལྟ་བུའམ། མི་མུན་པར་ཞུགས་པ་ལྟ་བུའམ། མིག་བཙུམས་པ་ལྟ་བུར་སེམས་ཀྱིས་དམིགས་པ་ཤིན་ཏུ་གསལ་བར་མི་མཐོང་བ་དེའི་ཚེ་བྱིང་བར་གྱུར་བར་རིག་པར་བྱའོ།། གང་གི་ཚེ་ཕྱི་རོལ་གྱི་གཟུགས་ལ་སོགས་པ་ལ་དེ་དག་གི་ཡོན་ཏན་རྟོག་པས་རྒྱུག་པའི་ཕྱིར་རམ། གཞན་ཡིད་ལ་བྱེད་པས་སམ། སྔོན་མྱོང་བའི་ཡུལ་ལ་འདོད་པས་སེམས་རྒོད་པའམ་རྒོད་དུ་དོགས་པར་མཐོང་བ་དེའི་ཚེ་འདུ་བྱེད་ཐམས་ཅད་མི་རྟག་པ་དང་། སྡུག་བསྔལ་བ་ལ་སོགས་པ་ཡིད་འབྱུང་བར་འགྱུར་བའི་དངོས་པོ་ཡིད་ལ་བྱའོ།།

जब जन्म देखि नै अन्धो जस्तै, वा अन्धकारमा प्रवेश गरेको व्यक्ति जस्तै अथवा आँखा चिम्लि (बन्द) राखेको व्यक्ति जस्तै चित्त आलम्बन (=ध्यान को विषय) लाई अत्यन्त स्पष्ट दिखाई दिन्दैन, तब त्यसलाई लीन (मग्न) भएको समझनु पर्दछ। जब बाहीरको रूप आदि मा उसैको गुणको कल्पनाबाट दौड़नाले वा अरू को मनसिकारले अथवा पूर्व अनुभवमा आएको विषयको इच्छाले चित्तमा औद्धत्य हो वा औद्धत्य भएको शंका लगेमा तब सबै संस्कार अनित्य, दु:ख आदि मन: संवेग प्रदत्त वस्तुहरूको मनसिकार गर्नु पर्दछ ।

དེ་ནས་རྣམ་པར་གཡེང་བ་ཞི་བར་བྱས་ནས་དྲན་པ་དང་ཤེས་བཞིན་གྱི་ཐག་པས་ཡིད་ཀྱི་གླང་པོ་ཆེ་དམིགས་པའི་སྡོང་པོ་དེ་ཉིད་ལ་གདགས་པར་བྱའོ།། གང་གི་ཚེ་བྱིང་བ་དང་རྒོད་པ་མེད་པར་གྱུར་ཏེ། དམིགས་པ་དེ་ལ་སེམས་རྣལ་དུ་འཇུག་པར་མཐོང་བ་དེའི་ཚེ་ནི་རྩོལ་བ་གློད་ལ་བཏང་སྙོམས་སུ་བྱ་ཞིང་། དེའི་ཚེ་ཇི་སྲིད་འདོད་ཀྱི་བར་དུ་འདུག་པར་བྱའོ། །དེ་ལྟར་ཞི་གནས་གོམས་པར་བྱས་པ་དེའི་ལུས་དང་སེམས་ཤིན་ཏུ་སྦྱངས་པར་གྱུར་པ་དང་། ཇི་ལྟར་འདོད་པ་བཞིན་དུ་དམིགས་པ་ལ་སེམས་རང་དབང་དུ་གྱུར་པ་དེའི་ཚེ་དེའི་ཞི་གནས་གྲུབ་པ་ཡིན་པར་རིག་པར་བྱའོ།།

त्यस पछि विक्षेपलाई शान्त गरेर स्मृति र संप्रजन्यको (डोरी) ले मनरूपी हाथीलाई त्यही आलम्बन रूपी वृक्षले बाँधेर राख्नु पर्दछ । जब लय र औद्धत्यको प्रभाव भएर त्यस आलम्बनमा चित्त समाहित दिखाई दिए, तब प्रयत्नलाई ढीला गरेर उपेक्षा गर्नु । उस समय जब सम्म इच्छा छ तब सम्म बसि रहनु । यसरी शमथको अभ्यास गर्ने त्यस (साधक) लाई जब शरीर तथा चित्तको प्रश्रब्धि प्राप्त होस् र जस्तो इच्छा छ त्यसरी नै आलम्बनमा चित्त आफ्नो वशमा होस्, तब समझनु पर्दछ कि त्यसको शमथ सिद्ध भएको हुन्छ ।

དེ་ནས་ཞི་གནས་གྲུབ་ནས་ལྷག་མཐོང་བསྒོམ་པར་བྱ་སྟེ། འདི་སྙམ་དུ་བསམ་པར་བྱའོ། །བཅོམ་ལྡན་འདས་ཀྱི་བཀའ་ཐམས་ཅད་ནི་ལེགས་པར་གསུངས་པ་སྟེ། མངོན་སུམ་མམ་བརྒྱུད་པས་དེ་ཁོ་ན་མངོན་པར་གསལ་བར་བྱེད་པ་དང་། དེ་ཁོ་ན་ལ་གཞོལ་བ་ཉིད་དོ།། དེ་ཁོ་ན་ཤེས་ན་སྣང་བ་བྱུང་བས་མུན་པ་བསལ་བ་བཞིན་དུ་ལྟ་བའི་དྲ་བ་

ཐམས་ཅད་དང་བྲལ་བར་འགྱུར་རོ། །ཞི་གནས་ཙམ་གྱིས་ནི་ཡེ་ཤེས་དག་པར་མི་འགྱུར་ཞིང་སྒྲིབ་པའི་མུན་པ་ཡང་སེལ་བར་མི་འགྱུར་གྱི། ཤེས་རབ་ཀྱིས་ནི་དེ་ཁོ་ན་ལེགས་པར་བསྒོམས་ན་ཡེ་ཤེས་རྣམ་པར་དག་པར་འགྱུར། ཤེས་རབ་ཁོ་ནས་དེ་ཁོ་ན་ཉིད་རྟོགས་པར་འགྱུར། ཤེས་རབ་ཁོ་ནས་སྒྲིབ་པ་ཡང་དག་པར་སྤོང་བར་འགྱུར་ཏེ། དེ་ལྟ་བས་ན་བདག་གིས་ཞི་གནས་ལ་གནས་ཏེ་ཤེས་རབ་ཀྱིས་དེ་ཁོ་ན་ཡོངས་སུ་བཙལ་བར་བྱའི། ཞི་གནས་ཙམ་གྱིས་ནི་ཆོག་པར་འཛིན་པར་མི་བྱའོ་སྙམ་དུ་བསམ་མོ།།

यस पछि शमथ सिद्ध गरेर विपश्यनाको भावना गर्नु पर्दछ र यसरी सोच्नु पर्दछ कि भगवान् बुद्धका सबै वचन सुभाषित छन्, किनकि वहां को उद्देश्य साक्षात् वा परम्परा ले तत्त्वलाई प्रत्यक्ष रूपमा प्रकाशित गर्नु र तत्त्वमा परायण हुनु नै छ । तत्त्वको ज्ञान भए पछि दृष्टि का सबै जालहरूबाट मुक्त हुन्छन् । जसरी आलोकको उदय भए पछि अन्धकारको निरास हुन्छन् । शमथ मात्रले न ज्ञान को विशुद्धि हुन्छन् र न ही आवरणको अन्धकार को निरास हुन्छ । प्रज्ञा द्वारा तत्वका सम्यक रूपमा भावना गर्ना ले ज्ञानको विशुद्धि हुन्छन् । प्रज्ञाबाट नै तत्त्वको अवगमन हुन्छन् । प्रज्ञाबाट नै आवरणको सम्यग् रूपले प्रहाण गरिन्छन् । यसैले यस्तो सोच्नु पर्दछ—मैले शमथमा स्थित भएर प्रज्ञा द्वारा तत्त्वको परिगवेषणा गर्नु पर्दछ, शमथ मात्रले संतोष हुनु हुँदैन ।

དེ་ཁོ་ན་ཇི་ལྟ་བུ་ཞེ་ན། གང་དོན་དམ་པར་དངོས་པོ་ཐམས་ཅད་གང་ཟག་དང་ཆོས་ཀྱི་བདག་གཉིས་ཀྱིས་སྟོང་པ་ཉིད་དོ། དེ་ཡང་ཤེས་རབ་ཀྱི་ཕ་རོལ་ཏུ་ཕྱིན་པས་རྟོགས་པར་འགྱུར་གྱི། གཞན་གྱིས་ནི་

མ་ཡིན་ཏེ། **འཕགས་པ་དགོངས་པ་ངེས་པར་འགྲེལ་པ་**ལས། "བཅོམ་ལྡན་འདས་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔས་ཆོས་རྣམས་ཀྱི་ངོ་བོ་ཉིད་མ་མཆིས་པ་ཉིད་ཕ་རོལ་ཏུ་ཕྱིན་པ་གང་གིས་འཛིན་པ་ལགས། སྤྱན་རས་གཟིགས་དབང་ཕྱུག་ཤེས་རབ་ཀྱི་ཕ་རོལ་ཏུ་ཕྱིན་པས་འཛིན་ཏོ།།" ཞེས་ཇི་སྐད་གསུངས་པ་ལྟ་བུའོ། །དེ་ལྟ་བས་ན་ཞི་གནས་ལ་གནས་ཏེ་ཤེས་རབ་བསྒོམ་པར་བྱའོ།།

तत्त्व कुन प्रकार का हुन ? जुन परमार्थतः सबै वस्तु पुद्गल (ज्ञाता) र धर्म (ज्ञेय) को दुई आत्माहरूले शून्य छन्, र त्यो पनि प्रज्ञापारमिता द्वारा जानिन्छ, अन्यथा जान्दैन, किनकि जस्तो—**आर्य-सन्धिनिर्मोचन सूत्रमा** भनिएको छ "भगवन् ! बोधिसत्त्वहरू द्वारा धर्महरूको निःस्वभावता कुन पारमिताबाट ग्रहण गर्न सकिन्छन् ? अवलोकितेश्वर ! प्रज्ञापारमिता द्वारा ग्रहण गर्न सकिन्छ । यसैले शमथमा स्थित भएर प्रज्ञाको भावना गर्नु ।

དེ་ལ་རྣལ་འབྱོར་པས་འདི་ལྟར་རྣམ་པར་དཔྱད་པར་བྱ་སྟེ། གང་ཟག་ནི་ཕུང་པོ་དང་ཁམས་དང་སྐྱེ་མཆེད་ལས་གུད་ན་མི་དམིགས་སོ།། གང་ཟག་ནི་ཕུང་པོ་ལ་སོགས་པའི་ངོ་བོ་ཉིད་ཀྱང་མ་ཡིན་ཏེ། ཕུང་པོ་ལ་སོགས་པ་དེ་དག་ནི་མི་རྟག་པ་དང་དུ་མའི་ངོ་བོ་ཡིན་པའི་ཕྱིར་དང་། གང་ཟག་ནི་རྟག་པ་དང་། གཅིག་པུའི་ངོ་བོ་ཡིན་པར་གཞན་དག་གིས་བརྟགས་པའི་ཕྱིར་རོ།། དེ་ཉིད་དམ་གཞན་དུ་བརྗོད་དུ་མི་རུང་བའི་གང་ཟག་གི་དངོས་པོ་ཡོད་པར་མི་རུང་སྟེ། དངོས་པོ་ཡོད་པའི་རྣམ་པ་གཞན་མེད་པའི་ཕྱིར་རོ། །དེ་ལྟ་བས་ན་འདི་ལྟ་སྟེ། འཇིག་རྟེན་གྱི་ང་དང་ངའི་ཞེས་བྱ་བ་འདི་ནི་འཁྲུལ་པ་ཁོ་ནའོ་ཞེས་དཔྱད་པར་བྱའོ།།

त्यहाँ योगीले यसरी विचार गर्नु पर्दछ कि पुद्गल स्कन्ध, धातु र आयतन देखि अलग देखिन्दैन् । पुद्गल स्कन्ध आदि का स्वभावको पनि होइन, किनकि त्यो स्कन्ध आदि अनित्य तथा अनेक स्वभावका छन् जबकि, पुद्गल नित्य र एक स्वभावको रूपमा भएको अरू द्वारा परिकल्पित गरेका छन् । तत्त्वत: वा अन्यत: मा अनिर्वचनीय (जून अरू को अगाडी बोल्न वा भन्न नसकिने) पुद्गलको सद् वस्तु हुनु अयुक्त छ किनकि वस्तु सत्ताको (तत् र तदेतर ले) कुनै अन्य प्रकारको हुँदैन । अत: यस प्रकार जगतको ''म र मेरो'' (जून) भनिन्छन् यो त भ्रम नै हो, यस्तो विचार गर्नु पर्दछ ।

ཆོས་ལ་བདག་མེད་པ་ཡང་འདི་ལྟར་བསྒོམ་པར་བྱ་སྟེ། ཆོས་ཞེས་བྱ་བ་ནི་མདོར་བསྡུས་ན་ཕུང་པོ་ལྔ་དང་། སྐྱེ་མཆེད་བཅུ་གཉིས་དང་། ཁམས་བཅོ་བརྒྱད་དོ། །དེ་ལ་ཕུང་པོ་དང་། སྐྱེ་མཆེད་དང་། ཁམས་གཟུགས་ཅན་གང་དག་ཡིན་པ་དེ་དག་ནི་དོན་དམ་པར་ན་སེམས་ཀྱི་རྣམ་པ་ལས་གུད་ན་མེད་དེ། དེ་དག་རྡུལ་ཕྲ་རབ་ཏུ་བཤིག་ལ་རྡུལ་ཕྲ་རབ་རྣམས་ཀྱང་ཆ་ཤས་ཀྱི་ངོ་བོ་ཉིད་སོ་སོར་བརྟགས་ན་ངོ་བོ་ཉིད་ངེས་པར་གཟུང་དུ་མེད་པའི་ཕྱིར་རོ། །དེ་ལྟ་བས་ན་ཐོག་མ་མེད་པའི་དུས་ནས་གཟུགས་ལ་སོགས་པ་ཡང་དག་པ་མ་ཡིན་པ་ལ་མངོན་པར་ཞེན་པའི་དབང་གིས་རྨི་ལམ་ན་དམིགས་པའི་གཟུགས་ལ་སོགས་པ་སྣང་བ་བཞིན་དུ་བྱིས་པ་རྣམས་ལ་སེམས་ཉིད་གཟུགས་ལ་སོགས་པ་ཕྱི་རོལ་དུ་ཆད་པ་བཞིན་དུ་སྣང་གི་དོན་དམ་པར་ན་འདི་ལ་གཟུགས་ལ་སོགས་པ་ནི་སེམས་ཀྱི་རྣམ་པ་ལས་གུད་ན་མེད་དོ་ཞེས་དཔྱད་པར་བྱའོ།། དེ་འདི་སྙམ་དུ་ཁམས་གསུམ་པོ་འདི་ནི་སེམས་ཙམ་མོ་

སྒོམ་དུ་སེམས་ཤིང་། དེས་དེ་ལྟར་ཆོས་བརྟགས་པ་མཐའ་དག་ནི་སེམས་ཁོ་ན་ཡིན་པར་རྟོགས་ནས་དེ་ལ་སོ་སོར་བརྟགས་ན་ཆོས་ཐམས་ཅད་ཀྱི་ངོ་བོ་ཉིད་ལ་སོ་སོར་བརྟགས་པ་ཡིན་ནོ་ཞེས་སེམས་ཀྱི་ངོ་བོ་ཉིད་ལ་སོ་སོར་རྟོག་གོ། དེ་འདི་ལྟར་དཔྱོད་དོ།།

धर्मनैरात्म्यको पनि यसरी भावना गर्नु पर्दछ । "धर्म" त संक्षेपमा पंचस्कन्ध, बाहर आयतन, अठार धातुहरू हुन; यसमा जुन रूपी स्कन्ध, आयतन तथा धातु छन् त्यो त परमार्थतः चित्तको आकारसंग भिन्न छैन, किनकि ती सबै लाई परमाणुहरूमा विभाग गर्दा खेरी परमाणुहरूको पनि अंशको स्वभावता प्रत्येकको परीक्षण गरेर नियत होइन भने त्यो 'स्वभाव' को ग्रहण गर्नु हुँदैन । यसैले अनादिकाल देखि मिथ्या रूप आदि को अभिनिवेशको कारण सपनामा दिखाई दिने रूप आदि का आभासको जस्तै अज्ञानिहरूलाई (अफ्नो) चित्त नै बाहिर् विच्छिन्न रूप आदि को जस्तै प्रतिभासित हुन्छन् । परमार्थतः यो रूप आदि चित्तको आकार देखि भिन्न छैन, यस्तो विचार गर्नु पर्दछ । त्यो यसरी सोच्दन्—"त्रैधातुक" (काम, रूप, अरूपधातु) चित्त मात्र हुम । त्यो यसरी चित्तका स्वभावको प्रत्यवेक्षण तथा विचार गर्दछन् कि सबैधर्म-प्रज्ञप्ति लाई चित्तमा नै भएको बोध गरेर त्यसमा प्रत्यवेक्षण गरेमा सबै धर्महरूको स्वभावको प्रत्यवेक्षण हुन्छन् ।

དོན་དམ་པར་ན་སེམས་ཀྱང་བདེན་པར་མི་རུང་སྟེ། གང་གི་ཚེ་བརྫུན་པའི་ངོ་བོ་ཉིད་གཟུགས་ལ་སོགས་པའི་རྣམ་པ་འཛིན་པའི་སེམས་ཉིད་སྣ་ཚོགས་ཀྱི་རྣམ་པར་སྣང་བ་དེའི་ཚེ་དེ་བདེན་པ་ཉིད་དུ་ག་ལ་འགྱུར། ཇི་ལྟར་གཟུགས་ལ་སོགས་པ་བརྫུན་པ་དེ་བཞིན་དུ་སེམས་ཀྱང་དེ་ལས་གུད་ན་མེད་པས་བརྫུན་པ་ཉིད་དོ། །ཇི་ལྟར་གཟུགས་ལ་

སོགས་པ་སྣ་ཚོགས་ཀྱི་རྣམ་པ་ཡིན་པས་གཅིག་དང་དུ་མའི་ངོ་བོ་ཉིད་མ་ཡིན་པ་དེ་བཞིན་དུ་སེམས་ཀྱང་དེ་ལས་གུད་ན་མེད་པའི་ཕྱིར་གཅིག་དང་དུ་མའི་ངོ་བོ་ཉིད་མ་ཡིན་ནོ། །དེ་ལྟ་བས་ན་སེམས་ནི་སྒྱུ་མ་ལ་སོགས་པའི་ངོ་བོ་ཉིད་ལྟ་བུ་ཁོ་ནའོ།།

परमार्थतः चित्त पनि सत्य हुनु युक्त छैनन् । जब मिथ्या स्वभाव भएको रूप आदि को आकार ग्रहण गर्ने चित्त नै अनेक आकारहरूमा प्रतिभासित हुन्छन्, तब त्यसको सत्यता नै कहाँ हुन्छन् ? जस्तो रूप आदि मिथ्या छन्, उसी प्रकार चित्त पनि यसबाट भिन्न न भएकोले मिथ्या (झूठ) नै हुन् । जस्तो रूप आदि अनेक आकार भएको हुनाले एक तथा अनेक स्वभावका छैन, उसी प्रकार चित्त पनि त्यसबाट भिन्न न भएको कारण एक तथा अनेक स्वभावको छैन । यसैले चित्त माया आदि स्वभावको समान नै छ ।

སེམས་ཇི་ལྟ་བ་དེ་བཞིན་དུ་ཆོས་ཐམས་ཅད་ཀྱང་སྒྱུ་མ་ལ་སོགས་པའི་ངོ་བོ་ཉིད་ལྟ་བུ་ཁོ་ནའོ་ཞེས་དཔྱོད་དོ། །དེས་དེ་ལྟར་ཤེས་རབ་ཀྱིས་སེམས་ཀྱི་ངོ་བོ་ཉིད་ལ་སོ་སོར་བརྟགས་ན་དོན་དམ་པར་སེམས་ནི་ནང་དུ་ཡང་མི་དམིགས་ས། ཕྱི་རོལ་དུ་ཡང་མི་དམིགས། གཉིས་ཀ་མེད་པར་ཡང་མི་དམིགས། འདས་པའི་སེམས་ཀྱང་མི་དམིགས། མ་འོངས་པ་ཡང་མི་དམིགས། ད་ལྟར་བྱུང་བ་ཡང་མི་དམིགས་སོ།།

यथावत् चित्तको जस्तै सबै धर्म पनि माया आदि को स्वभावको समान नै छ, यस्तो विचार गर्नु पर्दछ । त्यसबाट (साधक) यस प्रकार प्रज्ञाबाट चित्त स्वभावको प्रत्यवेक्षण गरेमा परमार्थतः चित्त भित्र पनि उपलब्ध हुँदैन । बाहीर पनि उपलब्ध हुँदैन । दुवै न भएमा पनि उपलब्ध हुँदैन । अतीत

चित्त पनि उपलब्ध हुँदैन, अनागतको पनि उपलब्ध हुँदैन, र प्रत्युत्पन्नमा पनि उपलब्ध हुँदैन ।

སེམས་སྐྱེ་བའི་ཚེ་གང་ནས་ཀྱང་མི་འོང་། འགག་པའི་ཚེ་གང་དུ་ཡང་མི་འགྲོ་སྟེ། སེམས་ནི་གཟུང་དུ་མེད་པ། བསྟན་དུ་མེད་པ། གཟུགས་ཅན་མ་ཡིན་པའོ། །བསྟན་དུ་མེད་ཅིང་གཟུང་དུ་མེད་ལ་གཟུགས་ཅན་མ་ཡིན་པ་གང་ཡིན་པ་དེའི་ངོ་བོ་ཉིད་ཅི་འདྲ་ཞེ་ན། **འཕགས་པ་དཀོན་མཆོག་བརྩེགས་པ་**ལས་ཇི་སྐད་གསུངས་པ་ལྟ་བུ་སྟེ། "འོད་སྲུངས་སེམས་ནི་ཡོངས་སུ་བཙལ་ན་མི་རྙེད་དོ། །གང་མ་རྙེད་པ་དེ་མི་དམིགས་སོ། །གང་མི་དམིགས་པ་དེ་འདས་པ་ཡང་མ་ཡིན། མ་འོངས་པ་ཡང་མ་ཡིན། ད་ལྟར་བྱུང་བ་ཡང་མ་ཡིན་ནོ།།" ཞེས་རྒྱ་ཆེར་འབྱུང་ངོ་། །དེས་དེ་ལྟར་བརྟགས་ན་སེམས་ཀྱི་དང་པོ་ཡང་དག་པར་རྗེས་སུ་མི་མཐོང་། ཐ་མ་ཡང་དག་པར་རྗེས་སུ་མི་མཐོང་། བར་མ་ཡང་དག་པར་རྗེས་སུ་མི་མཐོང་ངོ་།།

चित्त उत्पन्न हुने बेलामा न त कहीं बाट आउदछन् र न त निरूद्ध हुने बेलामा कहीं जान्छन, किनकि चित्त अग्राह्य (समात्न न सकिने) अनिदर्शन (देख्न न सकिने) (तथा) अरूपी हुन । जुन अनिदर्शन अग्राह्य, अरूपी हुन्, त्यसको स्वभाव कुन प्रकार को हो ? जस्तै **आर्यरत्नकुट** मा भनिएका छन्, त्यो यस प्रकारको छ—"काश्यप ! चित्त परिगवेषणा (पूर्ण खोज) गरेमा प्राप्त हुँदैन । जुन प्राप्त हुँदैन, त्यो अनुपलम्भ (प्रत्यक्ष हुँदैन) छ, (र) जुन अनुपलम्भ छ त्यो अतीत पनि होइन, अनागत पनि होइन (र) वर्तमान पनि होइन । यस्तो विस्तार ले भनिएको छ । यस प्रकार परीक्षण गरेमा चित्तको आदि

(स्वरूप) सम्यग् रूपले दिखाई दिन्दैन, अन्त पनि सम्यग् रूपमा दिखाई दिंन्दैन, मध्य पनि सम्यग् रूपमा दिखाई दिन्दैन् ।

ཇི་ལྟར་སེམས་ལ་མཐའ་དང་དབུས་མེད་པ་དེ་བཞིན་དུ་ཆོས་ཐམས་ཅད་ཀྱང་མཐའ་དང་དབུས་མེད་པར་ཁོང་དུ་ཆུད་དོ། །དེས་དེ་ལྟར་སེམས་མཐའ་དང་དབུས་མེད་པར་ཁོང་དུ་ཆུད་ནས་སེམས་ཀྱི་ངོ་བོ་ཉིད་གང་ཡང་མི་དམིགས་སོ། །སེམས་གང་གིས་ཡོངས་སུ་རྟོགས་པ་དེ་ཡང་སྟོང་པར་རྟོགས་སོ། །དེ་རྟོགས་པས་སེམས་ཀྱི་རྣམ་པར་བསྒྲུབས་པའི་ངོ་བོ་ཉིད་གཟུགས་ལ་སོགས་པའི་ངོ་བོ་ཉིད་ཀྱང་ཡང་དག་པར་རྗེས་སུ་མི་མཐོང་ངོ༎

जुन प्रकार चित्तमा अन्त र मध्य हुँदैन, उसी प्रकार सबै धर्महरुलाई पनि अन्त रहित तथा मध्यरहित जान्नु पर्दछ । यस प्रकार चित्त लाई अन्त र मध्यबाट रहित जान्नाले चित्तको स्वभावता केही पनि दिखाई दिन्दैन । जसले चित्तको परिज्ञान हुन्छन्, त्यसको बोध पनि शून्यको रूपमा हुन्छन् । त्यसको बोध भए पछि चित्तको आकारमा सिद्ध भएको स्वभाव रूप आदि को स्वभाव पनि सम्यक् रूपले दिखाई दिन्दैन ।

དེས་དེ་ལྟར་ཤེས་རབ་ཀྱིས་ཆོས་ཐམས་ཅད་ཀྱི་ངོ་བོ་ཉིད་ཡང་དག་པར་རྗེས་སུ་མ་མཐོང་བས་གཟུགས་རྟག་གོ་ཞེའམ། མི་རྟག་གོ་ཞེའམ། སྟོང་ངོ་ཞེའམ། མི་སྟོང་ངོ་ཞེའམ། ཟག་པ་དང་བཅས་པའོ་ཞེའམ། ཟག་པ་མེད་པའོ་ཞེའམ། བྱུང་བའོ་ཞེའམ། མ་བྱུང་བའོ་ཞེའམ། ཡོད་པའོ་ཞེའམ། མེད་པའོ་ཞེས་རྟག་པར་མི་བྱེད་དོ། །ཇི་ལྟར་གཟུགས་ལ་རྟོག་པར་མི་བྱེད་པ་དེ་བཞིན་དུ་ཚོར་བ་

དང་། འདུ་ཤེས་དང་། འདུ་བྱེད་དང་། རྣམ་པར་ཤེས་པ་
རྣམས་ལ་ཡང་རྟོག་པར་མི་བྱེད་དོ།། ཆོས་ཅན་མ་གྲུབ་ན་དེའི་བྱེ་བྲག་
རྣམས་ཀྱང་མི་འགྲུབ་པས་དེ་ལ་རྟོག་པར་ག་ལ་འགྱུར། དེས་དེ་ལྟར་
ཤེས་རབ་ཀྱིས་རྣམ་པར་དཔྱད་དེ་གང་གི་ཚེ་རྣལ་འབྱོར་པས་དངོས་པོ་
གང་གི་ངོ་བོ་ཉིད་དོན་དམ་པར་ངེས་པར་མི་འཛིན་པ་དེའི་ཚེ་རྣམ་པར་མི་
རྟོག་པའི་ཏིང་ངེ་འཛིན་ལ་འཇུག་གོ །ཆོས་ཐམས་ཅད་ཀྱི་ངོ་བོ་ཉིད་
མེད་པ་ཉིད་ཀྱང་རྟོགས་སོ།།

त्यो यसरी प्रज्ञा द्वारा सबै धर्महरूको स्वभाव सम्यग् रूपले दिखाई न दिएको कारण रूप नित्य छन् वा अनित्य छन्, शून्य छन् वा अशून्य, सास्रव छन् वा अनास्रव छन्, उत्पन्न छन् वा अनुत्पन्न छन्, सत् वा असत छन्, यस्तो कल्पना गर्नु हुँदैन; जुन प्रकार रूपमा विकल्पना गर्दैन, उसै प्रकार वेदना, संज्ञा, संस्कार तथा विज्ञानहरूमा पनि विकल्पना गर्दैन । (यदि) धर्महरू (को स्वभाव) असिद्ध भएको कारण त्यसको विशेषणहरूको पनि सिद्धि हुँदैन । यस कारण उनको विकल्प कसरी हुन्छ ? यस प्रकार उसको प्रज्ञा द्वारा परीक्षा गरेमा जब योगीलाई कुनै वस्तुको स्वभावको परमार्थताको निश्चित ग्रहण हुँदैन, तब निर्विकल्प समाधिमा प्रविष्ट हुन्छन् (र) सबै धर्महरूको निः-स्वभावताको पनि बोध हुन्छन् ।

གང་ཤེས་རབ་ཀྱིས་དངོས་པོའི་ངོ་བོ་ཉིད་སོ་སོར་བརྟགས་ནས་
མི་བསྒོམ་གྱི། ཡིད་ལ་བྱེད་པ་ཡོངས་སུ་སྤོང་བ་ཙམ་འབའ་ཞིག་སྒོམ་
པར་བྱེད་པ་དེའི་རྣམ་པར་རྟོག་པ་ནི་ཡང་མི་ལྡོག་ཅིང་ངོ་བོ་ཉིད་མེད་པ་
ཉིད་རྟོགས་པར་ཡང་མི་འགྱུར་ཏེ། ཤེས་རབ་ཀྱི་སྣང་བ་མེད་པའི་ཕྱིར་
རོ། །འདི་ལྟར་ཡང་དག་པར་སོ་སོར་རྟོག་པ་ཉིད་ལས་ཡང་དག་པ་ཇི་

ལྟ་བ་བཞིན་དུ་ཤེས་པའི་མེ་བྱུང་ན་གཙུབ་ཤིང་གཙུབས་པའི་མེ་བཞིན་དུ་རྟོག་པའི་ཤིང་སྲེག་གོ །ཞེས་བཅོམ་ལྡན་འདས་ཀྱིས་བཀའ་སྩལ་ཏོ།།

जुन प्रज्ञा द्वारा वस्तुहरूको स्वभावको प्रत्यवेक्षण गरेर भावना गर्दैन (र) केवल मनसिकार परित्याग मात्रको भावना गर्दछ, त्यसको विकल्प कहिले पनि निवृत्त हुँदैन र निःस्वभाव बोध पनि हुँदैन, किनकि त्यसमा प्रज्ञाको प्रकाशको अभाव हुन्छ। यस प्रकार सम्यग् प्रत्यवेक्षणबाट यथावत् सम्यग् ज्ञानका अग्नि उत्पन्न भए पछि अरणिमन्थन (आगो उत्पन्न गर्ने काठ को घर्षण) बाट् उत्पन्न आगो जस्तै कल्पना रूपी वृक्षलाई जलाई दिन्छ, यस्तो भगवान् (बुद्ध) ले भन्नुभएको थियो ।

འཕགས་པ་དཀོན་མཆོག་སྤྲིན་ལས་ཀྱང་བཀའ་སྩལ་ཏེ།

"དེ་ལྟར་སྐྱོན་ལ་མཁས་པ་དེ་སྤྲོས་པ་ཐམས་ཅད་དང་བྲལ་བར་བྱ་བའི་ཕྱིར་སྟོང་པ་ཉིད་བསྒོམ་པ་ལ་རྣལ་འབྱོར་དུ་བྱེད་དོ། །དེ་སྟོང་པ་ཉིད་ལ་བསྒོམ་པ་མང་བས་གནས་གང་དང་གང་དུ་སེམས་འཕྲོ་ཞིང་སེམས་མངོན་པར་དགའ་བའི་གནས་དེ་དང་དེ་དག་གི་ངོ་བོ་ཉིད་ཡོངས་སུ་བཙལ་ན་སྟོང་པར་རྟོགས་སོ། །སེམས་གང་ཡིན་པ་དེ་ཡང་བརྟགས་ན་སྟོང་པར་རྟོགས་སོ།། སེམས་གང་གིས་རྟོགས་པ་དེ་ཡང་ངོ་བོ་ཉིད་ཀུན་ཏུ་བཙལ་ན་སྟོང་པར་རྟོགས་ཏེ། དེ་དེ་ལྟར་རྟོགས་པས་མཚན་མ་མེད་པའི་རྣལ་འབྱོར་ལ་འཇུག་གོ" །ཞེས་འབྱུང་ངོ་། །འདིས་ནི་ཡོངས་སུ་རྟོག་པ་སྔོན་དུ་གཏོང་བ་ཉིད་མཚན་མ་མེད་པ་ཉིད་ལ་འཇུག་པར་བསྟན་ཏོ།།

आर्यरत्नमेघ (नाम महायान सूत्र) मा भनिएको छ—"यस प्रकार दोषहरूलाई (टाढा गर्नुमा) निपुण (विशेषज्ञ) त्यो व्यक्ति सबै प्रपञ्चहरूलाई ढाढा गर्नको लागि शून्यता का भावनाको योग गर्दछ । यसरी शून्यताको भावना अधिक गर्ना ले

त्यो जुन जुन स्थान मा चित्त फैलिन्छन् र चित्त प्रसन्न रहन्छन्, ती ती स्थानहरूको स्वभावको अन्वेषण (खोज) गरे पछि त्यसलाई शून्य को बोध हुन्छन् । जो चित्त छ, त्यो पनि परीक्षण गरेमा शून्यको बोध हुन्छन् । जुन चित्तबाट परीक्षण हुन्छन् त्यो पनि परीक्षण गरे पछि स्वभावत: शून्यत नै ज्ञान हुन्छन् त्यो साधक यस प्रकारले परीक्षण गर्नाले अनिमित्त योगमा प्रवृत्त (प्रवेश) हुन्छन् । यसबाट पर्यवेक्षण पूर्णागामिता को निर्निमितता मा प्रवेश दिखाएका छन् ।

ཡིད་ལ་བྱེད་པ་ཡོངས་སུ་སྤོང་བ་ཙམ་དང་། ཤེས་རབ་ཀྱི་དངོས་པོའི་ངོ་བོ་ཉིད་མི་དཔྱོད་པར་རྣམ་པར་མི་རྟོག་པ་ཉིད་དུ་འཇུག་པ་མི་སྲིད་པར་ཤིན་ཏུ་གསལ་བར་བསྟན་པ་ཡིན་ནོ། །དེ་ལྟར་དེ་ཤེས་རབ་ཀྱིས་གཟུགས་ལ་སོགས་པའི་དངོས་པོའི་ངོ་བོ་ཉིད་ཡང་དག་པ་ཇི་ལྟ་བ་བཞིན་དུ་བརྟགས་ནས་བསམ་གཏན་བྱེད་ཀྱི། གཟུགས་ལ་སོགས་པ་ལ་གནས་ནས་བསམ་གཏན་མི་བྱེད་ཅིང་། འཇིག་རྟེན་འདི་དང་འཇིག་རྟེན་ཕ་རོལ་གྱི་བར་ལ་གནས་ནས་བསམ་གཏན་མི་བྱེད་དེ། གཟུགས་ལ་སོགས་པ་དེ་དག་མི་དམིགས་པའི་ཕྱིར་རོ། །དེ་ལྟ་བས་ན་མི་གནས་པའི་བསམ་གཏན་པ་ཞེས་བྱའོ།།

मनसिकारको परित्याग मात्रले प्रज्ञा द्वारा वस्तुको स्वभावमा विचार गरे बिना निर्विकल्पतामा प्रवेश असम्भव न हुनु अत्यन्त स्पष्ट रूपले बताएका छन् यस प्रकार त्यो प्रज्ञा द्वारा रूप आदि वस्तुको स्वभावलाई यथावत् सम्यग् परीक्षण गरेर ध्यान गर्दछ, न कि रूप आदि मा स्थित भएर । यो लोक र परलोकको बीच मा रहेर समाधि गर्दैन, किनकि त्यो रूप आदि त्यहाँ उपलब्ध हुँदैन, यसैले (त्यसलाई) 'अप्रतिष्ठितध्यान' भन्दछन् ।

ཤེས་རབ་ཀྱིས་དངོས་པོ་མཐའ་དག་གི་ངོ་བོ་ཉིད་ལ་སོ་སོར་བརྟགས་ནས་གང་གི་ཕྱིར་མི་དམིགས་པར་བསམ་གཏན་བྱེད་པ་དེའི་ཕྱིར་ཤེས་རབ་མཆོག་གི་བསམ་གཏན་པ་ཞེས་བྱ་སྟེ། **འཕགས་པ་ནམ་མཁའ་མཛོད**་དང་། **འཕགས་པ་གཙུག་ན་རིན་པོ་ཆེ**་ལ་སོགས་པ་ལས་བསྟན་པ་བཞིན་ནོ།།

प्रज्ञा द्वारा समग्र वस्तुहरूको स्वभाव लाई प्रत्यवेक्षण (प्रत्येक को परीक्षण) गरेर, जुन कारणले त्यो अनुपलम्भ ध्यान गर्दछ, त्यसलाई "प्रज्ञोत्तरध्यान" (=उत्तम प्रज्ञा को ध्यान) भनिन्छन्, किनकि जस्तो "**आर्यगगनगञ्ज**" तथा "**रत्नचूड**" आदि मा भनिएको छ ।

དེ་ལྟར་གང་ཟག་དང་ཆོས་ལ་བདག་མེད་པའི་དེ་ཁོ་ན་ལ་ཞུགས་པ་དེ་ཡོངས་སུ་བརྟག་པར་བྱ་བ་བལྟ་བར་བྱ་བ་གཞན་མེད་པས་རྟོག་པ་དང་དཔྱོད་པ་དང་བྲལ་བ། བརྗོད་པ་མེད་པ་དང་གཅིག་ཏུ་གྱུར་པའི་ཡིད་ལ་བྱེད་པ་རང་གི་ངང་གིས་འཇུག་པ་མངོན་པར་འདུ་བྱེད་པ་མེད་པས་དེ་ཁོ་ན་ཉིད་ལ་ཤིན་ཏུ་གསལ་བར་བསྒོམ་ཞིང་འདུག་པར་བྱའོ། །དེར་གནས་ནས་སེམས་ཀྱི་རྒྱུན་རྣམ་པར་མི་གཡེང་བར་བྱའོ།།

यसरी त्यो पुद्गल तथा धर्मनैरात्म्य (आत्मा रहित) तत्त्वमा प्रवेश हुन्छन् र त्यो पूर्ण परीक्षा गर्नु मा तथा दर्शनीय न भएको ले, वितर्क (कल्पना) तथा विचार ले रहित, अनभिलाप्य (वाणीबाट बोल्न न हुने) का एक रूप भएको, मनसिकारगा आफु आफै प्रवेश गरेर, अनभिसंस्कार (बिना कुनै प्रयत्न) कारण तत्त्व का अत्यन्त स्पष्ट रूपले भावना गरेर बसी रहनु । त्यहाँ बसेर (यस प्रकार बसेर) चित्तको सन्तति (निरन्तरता) लाई विक्षिप्त (भटकनु) हुनु दिनु हुँदैन ।

གང་གི་ཚེ་བར་སྐབས་སུ་འདོད་ཆགས་ལ་སོགས་པས་སེམས་ཕྱི་རོལ་དུ་རྣམ་པར་གཡེང་བ་དེའི་ཚེ་རྣམ་པར་གཡེང་བ་ཚོར་བར་བྱས་ལ་མྱུར་དུ་མི་སྡུག་པ་བསྒོམ་པ་ལ་སོགས་པས་རྣམ་པར་གཡེང་བ་ཞི་བར་བྱས་ནས་མྱུར་དུ་དེ་བཞིན་ཉིད་ལ་སེམས་ཕྱིར་ཞིང་འཇུག་པར་བྱའོ། །གང་གི་ཚེ་དེ་ལ་སེམས་མངོན་པར་མི་དགའ་བར་མཐོང་བ་དེའི་ཚེ་ཏིང་འཛིན་གྱི་ཡོན་ཏན་མཐོང་བས་དེ་ལ་མངོན་པར་དགའ་བ་བསྒོམ་པར་བྱའོ།། རྣམ་པར་གཡེང་བ་ལ་ཉེས་པར་མཐོང་བས་ཀྱང་མི་དགའ་བ་རབ་ཏུ་ཞི་བར་བྱའོ། །

जब बीचमा राग आदि (क्लेशहरू) बाट चित्त बाहीर विक्षिप्त हुन्छन्, त्यस वेला "विक्षिप्त भएको (चित्त भट्क्यो)" (यस्तो) जानेर छिटै अशुभको भावना आदि बाट विक्षिप्त (भट्केको चित्त) लाई शान्त (स्थिर) गरेर छिटै नै तथतामा पुनः चित्तलाई लगाइ दिनु पर्दछ । जुन समय सम्म त्यहाँ (समाधिमा) चित्त प्रसन्न दिखाई दिन्दैन भने त्यो समय सम्म समाधिको गुणहरूलाई देखे पछि त्यहाँ (समाधि मा) प्रसन्नता को भावना गर्नु पर्दछ । विक्षेपमा दोष दिखाई दिएमा पनि अनभिरपि (अप्रसन्नता) लाई शान्त गर्नु पर्दछ ।

རྗེ་སྟེ་རྨུགས་པ་དང་གཉིད་ཀྱིས་ནོན་ཏེ་རྒྱུ་བ་མི་གསལ་བས་སེམས་བྱིང་ངམ་བྱིང་དུ་དོགས་པར་མཐོང་བ་དེའི་ཚེ་གོང་མ་བཞིན་དུ་མཆོག་ཏུ་དགའ་བའི་དངོས་པོ་ཡིད་ལ་བྱེད་པས་མྱུར་དུ་བྱིང་བ་ཞི་བར་བྱས་ལ། ཡང་དམིགས་པ་དེ་ཁོ་ན་དེ་ཉིད་ཤིན་ཏུ་དམ་པོར་གཟུང་བར་བྱའོ།།

यदि स्त्यान (ढीलापन) र मिद्ध (सुस्ती वा निन्द्रा लाग्ने अवस्था) ले अभिभूत भएर संचय (चित्तको व्यवहार) अस्पष्ट भएको मा चित्तको लय (मनको लीनता) को वा लीन (चिपकेको जस्तो मस्त) भएको शङ्का दिखाई दिए, त्यस समय पहिले को जस्तै परममुदित (परम आनन्द) वस्तुको मनसिकारबाट छिटो 'लय' (मनको लीनता) लाई शान्त गरेर पुनः त्यही आलम्बन (समाधि विषय) तत्त्वलाई अत्यन्त दृढ़ता (पक्का) ले ग्रहण गर्नु पर्दछ ।

ཇི་སྲི་གང་གི་ཚེ་རྨོངས་པས་བགད་པ་དང་། རྩེས་པ་རྗེས་སུ་དྲན་པས་བར་སྐབས་སུ་སེམས་འཕྲུར་བའམ་རྒོད་དུ་དོགས་པར་མཐོང་བ་དེའི་ཚེ་གོང་མ་བཞིན་དུ་མི་རྟག་པ་ལ་སོགས་པ་ཡིད་འབྱུང་བར་འགྱུར་བའི་དངོས་པོ་ཡིད་ལ་བྱས་ལ་གཡེང་བ་ཞི་བར་བྱ་ཞིང་། དེ་ནས་ཡང་དེ་ཁོ་ན་ཉིད་ལ་སེམས་མངོན་པར་འདུ་བྱེད་པ་མེད་པར་འཇུག་པར་འབད་པར་བྱའོ།།

यदि पहिले को हाँस्ने तथा खोल्ने को अनुस्मरण (पुनः संझनु) भएर बीचमा चित्तको समुद्धत भएमा वा औद्धत्य (ढीलापन) को संदेह दिखाई दिए, त्यस वेला (समय) पहिले को जस्तै नै अनित्यता आदि घृणा भएको वस्तुहरूको मनसिकार गरेर विक्षेप (भट्केको चित्त) लाई शान्त गर्नु । त्यस पछि फेरि त्यही तत्त्वमा चित्तको अभिसंस्कारबाट रहित भएर, प्रवेश गर्ने प्रयत्न गर्नु पर्दछ ।

ཇི་སྲི་གང་གི་ཚེ་བྱིང་བ་དང་རྒོད་པ་དང་བྲལ་བར་གྱུར་ནས་མཉམ་པར་ཞུགས་ཏེ་དེ་ཁོ་ན་ཉིད་ལ་སེམས་རང་གི་ངང་གིས་འཇུག་པར་འགྱུར་བ་དེའི་ཚེ་རྩོལ་བ་གློད་དེ་བཏང་སྙོམས་སུ་བྱའོ། །གལ་ཏེ་

སེམས་མཉམ་པར་ཞུགས་པ་ལ་བརྩལ་བ་བྱས་དེའི་ཚེ་སེམས་རྣམ་པར་གཡེང་བར་འགྱུར་རོ། །གལ་ཏེ་སེམས་བྱིང་བར་གྱུར་པ་ལ་བརྩལ་བར་མ་བྱས་ན་དེའི་ཚེ་ཤིན་ཏུ་བྱིང་བས་ལྷག་མཐོང་མེད་དེ། སེམས་དམུས་ལོང་བཞིན་དུ་འགྱུར་རོ། །དེ་ལྟ་བས་ན་སེམས་བྱིང་བར་གྱུར་ན་བརྩལ་བར་བྱའོ། །མཉམ་པར་གྱུར་ན་བརྩལ་བར་མི་བྱའོ།།

यदि जुन समय लय र औद्धत्य बाट हटेर समान रूपमा चित्त त्यही तत्त्वमा स्वरसवाही हुन्छन्, तब भोगलाई शिथिल गरेर उपेक्षा गर्नु । यदि चित्त संप्रवृत्त भए पछि आभोग गर्नु, तब चित्त विक्षिप्त हुन्छन् । यदि लीन भए पछि प्रयत्न न गर्नु, तब अतिलीनता को कारण विपश्यना हुँदैन, किनकि चित्त जात्यन्ध (जन्मदेखि अन्धा) को जस्तै हुँन्छन् । त्यसैले चित्त लीन भए पछि यत्न गर्नु । समता भएपछि यत्न गर्नु हुँदैन ।

གང་གི་ཚེ་ལྷག་མཐོང་བསྒོམས་པས་ཤེས་རབ་ཤིན་ཏུ་ཤས་ཆེ་བར་གྱུར་པ་དེའི་ཚེ་ཞི་གནས་ཆུང་བས་མར་མེ་རླུང་ལ་བཞག་པ་བཞིན་དུ་སེམས་གཡོ་བར་འགྱུར་ཏེ། དེའི་ཕྱིར་དེ་ཁོ་ན་ཤིན་ཏུ་གསལ་བར་མཐོང་བར་མི་འགྱུར་ཏེ། དེ་བས་ན་དེའི་ཚེ་ཞི་གནས་བསྒོམ་པར་བྱའོ།། ཞི་གནས་ཀྱི་ཤས་ཆེ་བར་གྱུར་ན་ཡང་ཤེས་རབ་བསྒོམ་པར་བྱའོ།།

जुन समय विपश्यना भावना गरेमा प्रज्ञा अत्यन्त बढ्छन्, तब शमथको कमीको कारण हावामा राखिएको दीपक समान चित्त चञ्चल हुना ले तत्त्व अत्यन्त स्पष्ट देखिाई दिन्दैन । यसैले त्यो समय शमथको भावना गर्नु पर्दछ । शमथको अत्यन्त अधिकता (धेरै) भए पछि पनि प्रज्ञाको भावना गर्नु पर्दछ ।

གང་གི་ཚེ་གཉིས་ཀ་མཉམ་དུ་འཇུག་པའི་ཚེ་ལུས་དང་སེམས་ལ་གནོད་པར་མ་གྱུར་གྱི་བར་དུ་མངོན་པར་འདུ་བྱེད་པ་མེད་པར་གནས་པར་བྱའོ། །ལུས་ལ་སོགས་པ་ལ་གནོད་པར་གྱུར་ན་དེའི་བར་སྐབས་སུ་འཇིག་རྟེན་མཐའ་དག་སྒྱུ་མ་དང་། སྨིག་རྒྱུ་དང་། རྨི་ལམ་དང་། ཆུ་ཟླ་དང་། མིག་ཡོར་ལྟ་བུར་ལྟ་ཞིང་འདི་སྙམ་དུ་བསམ་པར་བྱ་སྟེ། སེམས་ཅན་འདི་དག་ནི་ཆོས་ཟབ་མོ་འདི་ལྟ་བུ་ཁོང་དུ་མ་ཆུད་པས་འཁོར་བ་ན་ཀུན་ཏུ་ཉོན་མོངས་པར་འགྱུར་གྱིས། བདག་གིས་ཅི་ནས་ཀྱང་དེ་དག་ཆོས་ཉིད་དེ་ཁོང་དུ་ཆུད་པར་འགྱུར་བ་དེ་ལྟར་བྱའོ་སྙམ་དུ་བསམ་ཞིང་། སྙིང་རྗེ་ཆེན་པོ་དང་བྱང་ཆུབ་ཀྱི་སེམས་མངོན་དུ་བྱའོ། །དེ་ནས་ངལ་བསོ་ལ། ཡང་དེ་བཞིན་དུ་ཆོས་ཐམས་ཅད་སྣང་བ་མེད་པའི་ཏིང་ངེ་འཛིན་ལ་འཇུག་པར་བྱའོ།།

जब दुवै समान रूपमा प्रवृत्त भएमा, त्यो समय जब सम्म शरीर एवं चित्तमा पीड़ा (कष्ट) न लागोस्, तब सम्म अभिसंस्कार रहित स्थित रहनु पर्दछ । काय आदिमा पीड़ा भएमा, यसको बीचमा, समस्त जगतका माया (जादूगर), मरीचि, सपना, जलचन्द्र (स्वच्छ पानीमा चन्द्रमा को प्रतिबिम्ब) तथा प्रतिभास (झलक) को जस्तै देखेर यो सोच्नु पर्दछ कि—''यो प्राणी त यस प्रकारको गम्भीर धर्मलाई न जानेको कारण संसारमा संक्लिष्ट (संधैं क्लेश मन युक्त) हुन गयो, अत: मैले कुनै पनि प्रकारले ती (प्राणी) हरूलाई त्यस धर्मताको ज्ञान गराउन सकूं, अवश्य नै (मैले) यस्तो गर्नेछु यस्तो सोचेर महाकरुणा र बोधिचित्तलाई अभिमुख (साक्षात्कार) गर्नु पर्दछ । यस पछि विश्राम गरेर फेरि उसी प्रकार सर्वधर्मनिराभास समाधिमा लाग्नु पर्दछ ।

ཡང་སེམས་ཤིན་ཏུ་སྒྱོ་བར་གྱུར་ན་དེ་བཞིན་དུ་ངལ་གསོ་བར་བྱའོ།། འདི་ནི་ཞི་གནས་དང་ལྷག་མཐོང་ཟུང་དུ་འབྲེལ་བར་འཇུག་པའི་ལམ་སྟེ་རྣམ་པར་རྟོག་པ་དང་བཅས་པ་དང་། རྣམ་པར་མི་རྟོག་པའི་གཟུགས་བརྙན་ལ་དམིགས་པའོ།།

फेरि (जब) चित्तमा धेरै उदास भएमा उस्तै प्रकार आराम गर्नु पर्दछ । यो शमथ तथा विपश्यनाको युगल मार्ग हुन्, जुन सवितर्क र अवितर्क प्रतिबिम्बमा आलम्बित (केन्दित) छन्।

དེ་ལྟར་རྣལ་འབྱོར་པས་རིམ་པ་འདིས་ཆུ་ཚོད་གཅིག་གམ། མེལ་ཚེ་ཕྱེད་ཕྱེད་དམ། ཕྱེད་གཅིག་གམ། ཇི་སྲིད་འདོད་ཀྱི་བར་དུ་དེ་ཁོ་ན་བསྒོམ་ཞིང་འདུག་པར་བྱའོ། །འདི་ནི་དོན་རབ་ཏུ་རྣམ་པར་འབྱེད་པའི་བསམ་གཏན་ཏེ། **འཕགས་པ་ལང་ཀར་གཤེགས་པ་**ལས་བསྟན་ཏོ། །དེ་ནས་འདོད་ན་ཏིང་ངེ་འཛིན་ལས་ལངས་ཏེ་སྐྱིལ་མོ་ཀྲུང་མ་བཤིག་པར་འདི་སྙམ་དུ་ཆོས་འདི་དག་ཐམས་ཅད་དོན་དམ་པར་ངོ་བོ་ཉིད་མེད་པ་ཉིད་ཡིན་དུ་ཟིན་ཀྱང་། ཀུན་རྫོབ་ཏུ་རྣམ་པར་གནས་པ་ཉིད་དོ། །དེ་ལྟ་མ་ཡིན་ན་ལས་དང་འབྲས་བུ་འབྲེལ་བ་ལ་སོགས་པ་ཇི་ལྟར་རྣམ་པར་གནས་པར་འགྱུར། བཅོམ་ལྡན་འདས་ཀྱིས་ཀྱང་།

དངོས་པོ་སྐྱེ་བ་ཀུན་རྫོབ་ཏུ།།
དམ་པའི་དོན་དུ་རང་བཞིན་མེད། །ཅེས་བཀའ་སྩལ་ཏོ།།

यसरी योगी त्यस क्रमले एक घण्टा वा आधा प्रहर अथवा एक याम वा जति रहन चाहन्छौ, त्यति समय सम्म, तत्त्वको भावना गरेर बसि रहनु । यसलाई 'अर्थप्रविचय

ध्यान' भन्दछन्, जुन **आर्यलङ्कावतारसूत्रमा** भनिएका छन् । त्यस पछि यदि चाहे त समाधिबाट उठेर पर्यङ्क (समाधि अवस्थामा योगी बस्ने विशेष अंग स्थिति) लाई बिना खोली यस प्रकार सोच्नु पर्दछ कि यो सबै धर्म परमार्थतः निःस्वभाव भए पछि पनि संवृतिमा व्यवस्थित छन् । यस्तो न भएमा कर्म तथा फलको सम्बन्ध आदि कुन प्रकार ले व्यवस्थित हुन सकिन्छ ? भगवान् (बुद्ध) ले पनि भन्नु भएको छ—

"वस्तुहरूको उत्पत्ति संवृत्तिमा छंन् ।
परमार्थमा निःस्वभाव छन् ।।

यस्तो भनिएको छ ।

སེམས་ཅན་བྱིས་པའི་བློ་ཅན་འདི་དག་ནི་ངོ་བོ་ཉིད་མེད་པའི་དངོས་པོ་རྣམས་ལ་ཡོད་པ་ལ་སོགས་པ་སྒྲོ་འདོགས་པས་བློ་ཕྱིན་ཅི་ལོག་ཏུ་གྱུར་ཏེ། ཡུན་རིང་པོར་འཁོར་བའི་འཁོར་ལོ་ན་ཡོངས་སུ་འཁྲུམས་པས་བདག་གིས་ཅི་ནས་ཀྱང་བསོད་ནམས་དང་ཡེ་ཤེས་ཀྱི་ཚོགས་བླ་ན་མེད་པ་ཡོངས་སུ་རྫོགས་པར་བྱ་སྟེ། དེ་ནས་ཐམས་ཅད་མཁྱེན་པའི་གོ་འཕང་ཐོབ་པར་བྱས་ལ། དེ་དག་ཆོས་ཉིད་ཁོང་དུ་ཆུད་པར་བྱའོ་སྙམ་དུ་བསམས་ལ།

बालक समान बुद्धि भएका यो प्राणी निःस्वभाव वस्तुहरुमा सत्ता आदि को अध्यारोप गर्ना ले (जबरजस्ति थोप्नु) विपरित बुद्धि भएक लामो समयसम्म संसारको चक्रमा सम्यक् रूपमा (राम्ररी) भट्कि रहन्छन् । 'अतः म कुनै पनि प्रकारले अनुत्तर (यो भन्दा उत्तम अरू कुनै छैन) पुण्य तथा ज्ञानसंभारहरूलाई परिपूर्ण गरेर त्यस पछि सर्वज्ञ पद प्राप्त गरेर उनीहरूलाई धर्मताको अवबोध गर्ने छु यस्तो सोच्नु ।

དེ་ནས་དལ་བུས་སྐྱིལ་མོ་ཀྲུང་བཤིག་སྟེ་ཕྱོགས་བཅུ་ན་བཞུགས་པའི་སངས་རྒྱས་དང་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའ་ཐམས་ཅད་ལ་ཕྱག་བྱས་ལ། དེ་དག་ལ་མཆོད་པ་དང་བསྟོད་པ་བྱས་ནས། **འཕགས་པ་བཟང་པོ་སྤྱོད་པ**་ལ་སོགས་པའི་སྨོན་ལམ་རྒྱ་ཆེན་པོ་གདབ་བོ། །དེ་ནས་སྟོང་པ་ཉིད་དང་སྙིང་རྗེ་ཆེན་པོའི་སྙིང་པོ་ཅན་གྱི་སྦྱིན་པ་ལ་སོགས་པ་བསོད་ནམས་དང་ཡེ་ཤེས་ཀྱི་ཚོགས་མཐའ་དག་བསྒྲུབ་པ་ལ་མངོན་པར་བརྩོན་པར་བྱའོ།།

यस पछि आराम संग पर्यङ्क (समाधिमा बस्ने विशेष अवस्था) लाई खोलेर, दशदिशाहरू मा बस्ने सबै बुद्ध र बोधिसत्त्वहरूलाई प्रणाम गरेर, उनको पूजा एवं स्तुति गरेर "**आर्यभद्रचर्या**" आदि महाप्रणिधान गर्नु पर्दछ । त्यस पछि शून्यता तथा महाकरुणाले गर्भित दान आदि समस्त पुण्य एवं ज्ञानसंभारहरूलाई पूर्ण गर्न को लागि प्रयत्न गर्नु पर्दछ ।

དེ་ལྟར་གྱུར་ན་བསམ་གཏན་དེ་རྣམ་པ་ཐམས་ཅད་ཀྱི་མཆོག་དང་ལྡན་པའི་སྟོང་པ་ཉིད་མངོན་པར་བསྒྲུབས་པ་ཡིན་ཏེ། **འཕགས་པ་གཙུག་ན་རིན་པོ་ཆེ**་ལས་ཇི་སྐད་དུ། "དེ་བྱམས་པའི་གོ་ཆ་བགོས་ཤིང་སྙིང་རྗེ་ཆེན་པོའི་གནས་ལ་གནས་ནས་རྣམ་པ་ཐམས་ཅད་ཀྱི་མཆོག་དང་ལྡན་པའི་སྟོང་པ་ཉིད་མངོན་པར་བསྒྲུབ་པའི་བསམ་གཏན་བྱེད་དོ། །དེ་ལ་རྣམ་པ་ཐམས་ཅད་ཀྱི་མཆོག་དང་ལྡན་པའི་སྟོང་པ་ཉིད་གང་ཞེ་ན། གང་སྦྱིན་པ་དང་མ་བྲལ་བ། ཚུལ་ཁྲིམས་དང་མ་བྲལ་བ། བཟོད་པ་དང་མ་བྲལ་བ། བརྩོན་འགྲུས་དང་མ་བྲལ་བ། བསམ་གཏན་

དང་མ་བྲལ་བ ཤེས་རབ་དང་མ་བྲལ་བ། ཐབས་དང་མ་བྲལ་བ།" ཞེས་བྱ་བ་ལ་སོགས་པ་རྒྱ་ཆེར་བཀའ་སྩལ་པ་ལྟ་བུའོ།།

यस्तो भएमा त्यो ध्यान सर्वाकारको श्रेष्ठताले युक्त शून्यता रूपमा निष्पन्न हुन्छन् । जस्तो **आर्यरत्नचूड** मा भनिएको छ कि—"त्यो मैत्रीको कवच लगाएर, महाकरुणाको स्थानमा बसेर सर्वाकारको श्रेष्ठताले युक्त शून्यताको अभिनिर्हार भएको ध्यानलाई गर्दछ । त्यो सर्वाकार वरोपेतशून्यता के हुन् ? जुन दानबाट रहित छैन, जुन शीलबाट रहित छैन, जुन क्षान्तिबाट रहित छैन, जुन वीर्यबाट रहित छैन, जुन ध्यानबाट रहित छैन, जुन प्रज्ञाबाट रहित छैन र जुन उपायबाट रहित छैन," इत्यादि विस्तारले भनिएका छन् ।

བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའ་ནི་སེམས་ཅན་ཐམས་ཅད་ཡོངས་སུ་སྨིན་པར་བྱེད་པ་དང་། ཞིང་དང་། ལུས་དང་། གཡོག་འཁོར་མང་པོ་ལ་སོགས་པ་ཕུན་སུམ་ཚོགས་པར་གྱུར་པའི་ཐབས་སྦྱིན་པ་ལ་སོགས་པའི་དགེ་བ་ངེས་པར་བསྟེན་པར་བྱ་དགོས་སོ།།

बोधिसत्त्वहरूलाई सबै प्राणिहरूको परिपाक गर्नु पर्दछ र (बुद्ध) क्षेत्र, काय, सेवक-परिवार आदि सम्पन्न उपाय भएका दान आदि कुशलहरूको अवश्य सेवन गर्नु पर्दछ ।

དེ་ལྟ་མ་ཡིན་ན་སངས་རྒྱས་རྣམས་ཀྱི་ཞིང་ལ་སོགས་པ་ཕུན་སུམ་ཚོགས་པ་གང་བཀའ་སྩལ་པ་དེ་གང་གི་འབྲས་བུ་ཡིན་པར་འགྱུར། དེ་ལྟ་བས་ན་རྣམ་པ་ཐམས་ཅད་ཀྱི་མཆོག་དང་ལྡན་པ་ཐམས་ཅད་མཁྱེན་པའི་ཡེ་ཤེས་དེ་ནི་སྦྱིན་པ་ལ་སོགས་པ་ཐབས་ཀྱིས་ཡོངས་སུ་རྫོགས་པར་འགྱུར་བས་**བཅོམ་ལྡན་འདས་ཀྱིས་**"ཐམས་ཅད་མཁྱེན་པའི་ཡེ་ཤེས་དེ་

ནི་ཐབས་ཀྱིས་མཐར་ཕྱིན་པ་ཡིན་ནོ།།" ཞེས་བཀའ་སྩལ་ཏོ། །དེའི་ཕྱིར་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔས་སྦྱིན་པ་ལ་སོགས་པ་ཐབས་ལ་ཡང་བསྟེན་པར་བྱའི། སྟོང་པ་ཉིད་འབའ་ཞིག་ནི་མ་ཡིན་ནོ།།

अन्यथा बुद्धहरूको क्षेत्र आदि को जुन सम्पत्ति भनिएको छ त्यो कसको फल होला ? यसैले सर्वाकार वरोपेत त्यो सर्वज्ञताको ज्ञान र दान आदि उपायहरूले परिपूर्ण भएको कारण हो, भगवान् (बुद्ध) ले यस्तो भन्नु भएको थियो—''त्यो सर्वज्ञज्ञान र उपायले पारङ्गत छन्'' । अतः बोधिसत्त्वले दान आदि उपायहरू पनि सेवन गर्नु पर्दछ, न कि शून्यता मात्र होइन।

དེ་སྐད་དུ་**འཕགས་པ་ཆོས་ཐམས་ཅད་ཤིན་ཏུ་རྒྱས་པ་བསྡུས་པ་**ལས་ཀྱང་བཀའ་སྩལ་ཏེ། "བྱམས་པ་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའ་རྣམས་ཀྱི་ཕ་རོལ་ཏུ་ཕྱིན་པ་དྲུག་ཡང་དག་པར་བསྒྲུབས་པ་འདི་ནི་རྫོགས་པའི་བྱང་ཆུབ་ཀྱི་ཕྱིར་ཡིན་ན། དེ་ལ་མི་བླུན་པོ་དེ་དག་འདི་སྐད་དུ། བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའ་ཤེས་རབ་ཀྱི་ཕ་རོལ་ཏུ་ཕྱིན་པ་ཁོ་ན་ལ་བསླབ་པར་བྱའི། ཕ་རོལ་ཏུ་ཕྱིན་པ་ལྷག་མ་རྣམས་ཀྱིས་ཅི་ཞིག་བྱ་ཞེས་ཟེར་ཞིང་། དེ་དག་ཕ་རོལ་ཏུ་ཕྱིན་པ་གཞན་དག་ལ་ཡང་སུན་འབྱིན་པར་སེམས་སོ།། མ་ཕམ་པ་འདི་ཇི་སྙམ་དུ་སེམས། ཀཱ་ཤི་ཀའི་རྒྱལ་པོར་གྱུར་པ་གང་ཡིན་པ་དེས་ཕུག་རོན་གྱི་ཕྱིར་རང་གི་ཤ་ཁྲ་ལ་བྱིན་པ་དེ་ཤེས་རབ་འཆལ་བ་ཡིན་ནམ། བྱམས་པས་གསོལ་པ། བཅོམ་ལྡན་འདས་དེ་ནི་མ་ལགས་སོ། །བཅོམ་ལྡན་འདས་ཀྱིས་བཀའ་སྩལ་པ། བྱམས་པ་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའི་སྤྱད་པ་སྤྱོད་པ་ན་ཕ་རོལ་ཏུ་ཕྱིན་པ་དྲུག་དང་ལྡན་པའི་དགེ་བའི་རྩ་བ་གང་དག་བསགས་པའི་དགེ་བའི་རྩ་བ་དེ་དག་

གིས་གནོད་པར་གྱུར་ཏམ། བྱམས་པས་གསོལ་པ། བཅོམ་ལྡན་འདས་དེ་ནི་མ་ལགས་སོ། བཅོམ་ལྡན་འདས་ཀྱིས་བཀའ་སྩལ་པ། མ་ཕམ་པ་ཁྱོད་ཀྱིས་ཀྱང་བསྐལ་པ་དྲུག་ཅུར་སྦྱིན་པའི་ཕ་རོལ་ཏུ་ཕྱིན་པ་ཡང་དག་པ་བསྒྲུབས། བསྐལ་པ་དྲུག་ཅུར་ཚུལ་ཁྲིམས་ཀྱི་ཕ་རོལ་ཏུ་ཕྱིན་པ། བསྐལ་པ་དྲུག་ཅུར་བཟོད་པའི་ཕ་རོལ་ཏུ་ཕྱིན་པ། བསྐལ་པ་དྲུག་ཅུར་བརྩོན་འགྲུས་ཀྱི་ཕ་རོལ་ཏུ་ཕྱིན་པ། བསྐལ་པ་དྲུག་ཅུར་བསམ་གཏན་གྱི་ཕ་རོལ་ཏུ་ཕྱིན་པ། བསྐལ་པ་དྲུག་ཅུར་ཤེས་རབ་ཀྱི་ཕ་རོལ་ཏུ་ཕྱིན་པ་ཡང་དག་པར་བསྒྲུབས་ན། དེ་ལ་མི་བླུན་པོ་དེ་དག་འདི་སྐད་དུ་ཚུལ་གཅིག་ཁོ་ནས་བྱང་ཆུབ་སྟེ། འདི་ལྟ་སྟེ། སྟོང་པ་ཉིད་ཀྱི་ཚུལ་གྱིས་སོ་ཞེས་ཟེར་ཏེ། དེ་དག་ནི་སྤྱོད་པ་ཡོངས་སུ་མ་དག་པར་འགྱུར་རོ'' །ཞེས་བྱ་བ་ལ་སོགས་པ་འབྱུང་ངོ་॥

यस प्रकार **आर्यसर्वधर्मवैपुल्य** मा भनिएका छन्—"हे मैत्रेय ! यो त बोधिसत्त्वहरूको सम्बोधि को लागि षट् (छ:) पारमिताको समुदागम गर्दछ, त्यसलाई जुन अज्ञानि पुरुषहरुले यसरी भन्दन्छन्—बोधिसत्त्वले प्रज्ञापारमिता मात्रको शिक्षा लिनु पर्दछ । शेष पारमिताहरू बाट के गर्ने ? तिनीहरू अन्य पारमिताहरू लाई पनि दूषित गर्ने कुरा सोच्दछन् । हे अजित ! यसलाई तिमिले के बुझ्दछौ ? के काशी को राजा दुर्बुद्धि थिए? जसले परेवा (रक्षा) को लागि आफ्नो मांस श्येन (बाज अर्थात् परेवा आदि लाई खाने पंक्षी) लाई दान दिए का थिए । मैत्रेय ले भने—भगवन् ! यो त होइन । भगवन् (बुद्ध) ले भन्नुभयो—मैत्रेय ! बोधिसत्त्व चर्याको आचरण गर्दा खेरी मैले जुन छ: पारमिताहरूबाट युक्त जुन कुशलमूलहरूको अर्जन (संचय) गरे, के ती कुशलभूतहरूले हानि पुर्याएँ ? मैत्रेय ले भने—भगवन् ! यो त होइन । भगवन् बुद्ध ले भन्नभयो—हे

अजित ! तपाईले पनि साठी (६०) कल्पहरू सम्म दानपारमिता को सम्यक्रूपले पालन गर्नु भएका थिए, साठी कल्पहरू सम्म शीलपारमिता, साठी कल्पहरू सम्म क्षान्ति-पारमिता, साठी कल्पहरू सम्म वीर्यपारमिता, साठी कल्पहरू सम्म ध्यानपारमिता र साठी कल्पहरू सम्म प्रज्ञापारमिताको अनुष्ठान गर्नु भएको थियो । त्यसमा मूर्ख पुरुष यस प्रकार भन्दछन् कि— एउटै नैब (तरीका) बाट बोधि हुन सक्छ, जस्तो कि शून्यता नैब बाट । तिनीहरू चर्या अपरिशुद्ध (आचरण देखि नै अशुद्ध) हुन्छन ।'' इत्यादि ।

ཐབས་དང་བྲལ་ན་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའི་ཤེས་རབ་འབའ་ཞིག་གིས་ནི་ཉན་ཐོས་བཞིན་དུ་སངས་རྒྱས་ཀྱི་མཛད་པ་བྱེད་མི་ནུས་ཀྱི། ཐབས་ཀྱིས་བསྟངས་ན་ནུས་པར་འགྱུར་ཏེ། **འཕགས་པ་དཀོན་མཆོག་བརྩེགས་པ**་ལས་ཇི་སྐད་དུ། འོད་སྲུང་འདི་ལྟ་སྟེ་དཔེར་ན་བློན་པོས་ཟིན་པའི་རྒྱལ་པོ་རྣམས་དགོས་པ་ཐམས་ཅད་བྱེད་པ་དེ་བཞིན་དུ་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའི་ཤེས་རབ་ཐབས་མཁས་པས་ཡོངས་སུ་ཟིན་པ་དེ་ཡང་སངས་རྒྱས་ཀྱི་མཛད་པ་ཐམས་ཅད་བྱེད་དོ། །ཞེས་གསུངས་པ་ལྟ་བུའོ།།

उपायबाट टाढा भए पछि बोधिसत्त्व केवल प्रज्ञा बाट नै श्रावकको जस्तै बुद्धको कार्य गर्न सक्दैन । उपायको सहायताले (बोधिसत्त्व बुद्ध को कार्य गर्नमा) समर्थ हुन सकिन्छ । जस्तो कि **आर्यरत्नकुटमा** भनिएको छ—''हे काश्यप ! जुन किसिमले मन्त्रिहरू सहित राजाले पनि सबै आवश्यक कार्य गर्छन, उसै प्रकार बोधिसत्त्व को उपाय-कौशलले युक्त बोधिसत्वहरूको प्रज्ञा सबै बुद्धकार्य गर्दछन् ।''

བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའ་རྣམས་ཀྱི་ལམ་གྱི་ལྟ་བ་ཡང་གཞན། མུ་སྟེགས་ཅན་དང་། ཉན་ཐོས་རྣམས་ཀྱི་ལམ་གྱི་ལྟ་བ་ཡང་གཞན་ཏེ།

འདི་ལྟར་མུ་སྟེགས་ཅན་རྣམས་ཀྱི་ལམ་གྱི་ལྟ་བ་ནི་བདག་ལ་སོགས་པར་ཕྱིན་ཅི་ལོག་དང་ལྡན་པའི་ཕྱིར་ཐམས་ཅད་ཀྱི་ཐམས་ཅད་དུ་ཤེས་རབ་དང་བྲལ་བའི་ལམ་ཡིན་ཏེ། དེ་བས་ན་དེ་དག་ཐར་པ་མི་ཐོབ་བོ།།

बोधिसत्त्वहरूको मार्गगत दृष्टि पनि अन्य छन्, तैर्थिक तथा श्रावकहरूको मार्गगत दृष्टि पनि अलग छन् । यस प्रकार तैर्थिकहरू को मार्ग—दृष्टि त आत्मा आदि को विप्रतिपत्तिहरूबाट युक्त भएको कारण पूरा का पूरा प्रज्ञा ले रहित मार्ग हुन् । यसैले उनीहरू (तैर्थिकहरू=आत्मा मान्नेहरूको) लाई मोक्ष प्राप्त हुँदैन ।

ཉན་ཐོས་རྣམས་ཀྱིས་ནི་སྙིང་རྗེ་ཆེན་པོ་དང་བྲལ་བས་ཐབས་དང་མི་ལྡན་པ་ཡིན་ཏེ། དེ་བས་ན་དེ་དག་གཅིག་ཏུ་མྱ་ངན་ལས་འདས་པ་ལ་གཞོལ་བར་འགྱུར་རོ། །བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའ་རྣམས་ཀྱི་ལམ་ནི་ཤེས་རབ་དང་ཐབས་དང་ལྡན་པར་འདོད་དེ། དེ་བས་ན་དེ་དག་མི་གནས་པའི་མྱ་ངན་ལས་འདས་པ་ལ་གཞོལ་བར་འགྱུར་རོ། །བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའ་རྣམས་ཀྱི་ལམ་ནི་ཤེས་རབ་དང་ཐབས་དང་ལྡན་པར་འདོད་དེ། དེས་ན་མི་གནས་པའི་མྱ་ངན་ལས་འདས་པ་ཐོབ་སྟེ། ཤེས་རབ་ཀྱི་སྟོབས་ཀྱིས་ནི་འཁོར་བར་མི་ལྷུང་ལ། ཐབས་ཀྱི་སྟོབས་ཀྱིས་ནི་མྱ་ངན་ལས་འདས་པར་མི་ལྷུང་བའི་ཕྱིར་རོ།།

श्रावकहरू को भूमि महाकरुणाबाट रहित भएको ले उपायबाट युक्त छैन्, यसैले तिनीहरू एक्लै नै निर्वाण मा लागिन्छ । बोधिसत्त्वहरूको मार्ग प्रज्ञा र उपायले युक्त हुन्छन् । अत: तिनी (बोधिसत्त्व) हरू अप्रतिष्ठित निर्वाणमा परायण हुने तिर लाग्दछन् । बोधिसत्त्वहरूको मार्गलाई प्रज्ञा तथा उपायले युक्त मान्दछन्, यसैले ती मार्ग अभीष्ट छन्, अत: तिनी

(बोधिसत्त्व) अप्रतिष्ठित निर्वाणलाई प्राप्त गर्दछन्, किनकि प्रज्ञाको बलले तिनी संसारमा गिर्दैनन र उपायको बलबाट (ती श्रावक) को निर्वाणमा पनि गिर्दैनन् (खस्दैन) ।

དེ་བས་ན་**འཕགས་པ་ག་ཡཱ་མགོའི་རི་**ལས། "བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའ་རྣམས་ཀྱི་ལམ་ནི་མདོར་བསྡུ་ན་འདི་གཉིས་ཏེ། གཉིས་གང་ཞེ་ན། འདི་ལྟ་སྟེ། ཐབས་དང་ཤེས་རབ་བོ།" །ཞེས་བཀའ་སྩལ་ཏོ།། **འཕགས་པ་དཔལ་མཆོག་དང་པོ་**ལས་ཀྱང་། ཤེས་རབ་ཀྱི་ཕ་རོལ་ཏུ་ཕྱིན་པ་ནི་**མ་**ཡིན་ནོ། །ཐབས་ལ་མཁས་པ་ནི་**ཕ་**ཡིན་ནོ། །ཞེས་བཀའ་སྩལ་ཏོ།།

अत: **आर्यगयाशीर्षमा** भनिएको छ—''बोधिसत्त्वहरूको मार्ग संक्षेपमा दुई वटा छन् , कुन चाहि दुई वटा ? उपाय र प्रज्ञा ।'' **आर्यश्रीपरमाद्य** (नामक महायान कल्पराज) मा पनि भनिएको छ—''प्रज्ञापारमिता आमा हुन र उपाय-कौशल पिता हुन ।''

འཕགས་པ་དྲི་མ་མེད་པར་གྲགས་པས་བསྟན་པ་ལས་ཀྱང་། "བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའ་རྣམས་ཀྱི་འཆིང་བ་ནི་གང་། ཐར་པ་ནི་གང་ཞེ་ན། ཐབས་མེད་པར་སྲིད་པར་འགྲོ་བ་ཡོངས་སུ་འཛིན་པ་ནི་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའི་འཆིང་བའོ།། ཐབས་ཀྱིས་སྲིད་པའི་འགྲོ་བར་འགྲོ་བ་ནི་ཐར་པའོ།ཤེས་རབ་མེད་པར་སྲིད་པར་འགྲོ་བ་ཡོངས་སུ་འཛིན་པ་ནི་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའི་འཆིང་བའོ། །ཤེས་རབ་ཀྱིས་སྲིད་པའི་འགྲོ་བར་འགྲོ་བ་ནི་ཐར་པའོ། །ཐབས་ཀྱིས་མ་ཟིན་པའི་ཤེས་རབ་ནི་འཆིང་བའོ། །ཐབས་ཀྱིས་ཟིན་པའི་ཤེས་རབ་ནི་ཐར་པའོ། །ཤེས་

རབ་ཀྱིས་མ་ཟིན་པའི་ཐབས་ནི་འཆིང་བའོ། །ཤེས་རབ་ཀྱིས་ཟིན་པའི་ཐབས་ནི་ཐར་པའོ།" །ཞེས་རྒྱ་ཆེར་བཀའ་སྩལ་ཏོ།།

आर्यविमलकीर्तिनिर्देश (नामक महायान सूत्र) मा पनि भनिएको छ—''बोधिसत्त्वहरूको बन्धन के हो ? मोक्ष के हुन? बिना उपायबाट संसारको गतिलाई परिग्रह गर्नु बोधिसत्त्वहरूको बन्धन हुन । उपायले संसारको गतिलाई परिग्रहण गर्नु बोधिसत्त्वहरुको बन्धन हुन् । उपायबाट संसारको गतिमा हिड्नाले मोक्ष पाउन सक्छन् । प्रज्ञा बिना भव (संसार) गतिलाई परिग्रहण गर्नु बोधिसत्त्वको बन्धन हुन् । प्रज्ञा द्वारा भव गतिमा जानु मोक्ष हो। उपायबाट परिग्रहण नगरेको प्रज्ञा पनि बन्धन हुन् । उपायबाट गृहीत प्रज्ञा मुक्ति हुन्, प्रज्ञा बाट परिग्रहण न नगरेको उपाय पनि बन्धन हुन् । प्रज्ञा बाट परिगृही उपाय मुक्ति हुन ।'' इत्यादि विस्तारै भनिएका छन् ।

བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔས་ཤེས་རབ་ཙམ་བསྟེན་ན་ནི་ཉན་ཐོས་ཀྱིས་འདོད་པའི་མྱ་ངན་ལས་འདས་པར་ལྷུང་བས་འཆིང་བ་བཞིན་དུ་འགྱུར་ཏེ། མི་གནས་པའི་མྱ་ངན་ལས་འདས་པས་གྲོལ་བར་མི་འགྱུར་རོ། །དེ་ལྟ་བས་ན་ཐབས་དང་བྲལ་བའི་ཤེས་རབ་ནི་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའ་རྣམས་ཀྱི་འཆིང་བའོ། །ཞེས་བྱའོ། །དེ་ལྟ་བས་ན་ལྷགས་པས་ཉེན་པ་ལ་མེ་བསྟེན་པ་བཞིན་དུ་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔས་ཕྱིན་ཅི་ལོག་གི་ལྷགས་པ་ཙམ་སྤང་པའི་ཕྱིར་ཐབས་དང་བཅས་པའི་ཤེས་རབ་ཀྱིས་སྟོང་པ་ཉིད་བསྟེན་པར་བྱའི། ཉན་ཐོས་བཞིན་དུ་མངོན་དུ་ནི་མི་བྱ་སྟེ།

बोधिसत्त्वको प्रज्ञा-मात्रको सेवन गर्ना ले श्रावकहरूको इष्ट निर्वाणमा खस्छन्, जितेको कारण (त्यो निर्वाण) बन्धन जस्तो हुन्छन् । अप्रतिष्ठित निर्वाणबाट मुक्ति हुँदैन । यसैले उपायबाट रहित (टाढा) प्रज्ञा बोधिसत्त्वहरूको बन्धन हुन्,

यस्तो भनिएका छन् । अतः वायुबाट पीड़ित भएका प्राणीहरू ले अग्नि सेवनको जस्तै बोधिसत्त्व विपर्यास (मिथ्या दृष्टि) रूपी वायु-मात्रको प्रहाण गर्नको (त्याग्ना) लागि उपाय सहित प्रज्ञा द्वारा शून्यताको सेवन गर्नु किन भने श्रावकले जस्तै साक्षात्कार गर्नु ।

འཕགས་པ་ཆོས་བཅུ་པའི་མདོ་ལས་ཇི་སྐད་དུ། "རིགས་ཀྱི་བུ་འདི་ལྟ་སྟེ། དཔེར་ན་མི་ལ་ལ་ཞིག་མི་ཡོངས་སུ་སྤྱོད་པར་གྱུར་ཏེ། དེ་མེ་དེ་ལ་བསྙེ་སྐུར་བྱེད། བླ་མར་བྱེད་ཀྱང་དེ་འདི་སྙམ་དུ་བདག་གིས་མེ་དེ་ལ་བསྙེ་སྐུར་བྱས། བླ་མར་བྱས། རི་མོར་བྱས་ཀྱང་འདི་ལ་ལག་པ་གཉིས་ཀྱིས་ཡོངས་སུ་གཟུང་བར་བྱའོ་སྙམ་དུ་མི་སེམས་སོ།། དེ་ཅིའི་ཕྱིར་ཞེ་ན། གཞི་དེ་ལས་བདག་ལ་ལུས་ཀྱི་སྡུག་བསྔལ་བའམ། སེམས་ཀྱི་ཡིད་མི་བདེ་བར་འགྱུར་དུ་འོང་སྙམ་པའི་ཕྱིར་རོ། །དེ་བཞིན་དུ་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའ་ཡང་མྱ་ངན་ལས་འདས་པའི་བསམ་པ་ཅན་ཡང་ཡིན་ལ་མྱ་ངན་ལས་འདས་པ་མངོན་སུམ་དུ་ཡང་མི་བྱེད་དོ།། དེ་ཅིའི་ཕྱིར་ཞེ་ན། གཞི་དེ་ལས་བདག་བྱང་ཆུབ་ལས་ཕྱིར་ཕྱོག་པར་འགྱུར་དུ་འོང་སྙམ་པའི་ཕྱིར་རོ།" །ཞེས་བཀའ་སྩལ་པ་ལྟ་བུའོ།།

आर्यदशधर्मसूत्र मा भनिएको छ—"कुलपुत्र ! जस्तै कुनै मनुष्य अग्निको अर्चना (सेवा वा पूजा) गर्दछन्, उसले त्यस अग्निको सत्कार गर्दछन् । गुरूकार गरेमा पनि के त्यो यस्तो सोच्दछन् कि "म त्यस अग्निको सत्कार गर्दछु (पूजा-अर्चना गर्दछु), गुरूकार गर्दछु । धेरै (बहु) मान गर्ना ले पनि यस (अग्नि) लाई दुवै हाथहरूले परिग्रहण गर्छु । यस्तो सोच्नु हुँदैन । त्यो कसरी ? त्यो यसैले कि—"उस वस्तु (अग्नि) बाट मलाई शारीरिक दु:ख वा चित्तमा मानसिक अशान्ति हुन सक्छन्" यस्तो सोच्दछन् ? उसी प्रकार बोधिसत्त्व पनि

निर्वाणको विचार भएका भए पनि निर्वाणको प्रत्यक्ष गर्देनन् । त्यो कुन कारणले ? यस्तो भने मा 'यसको आश्रयले म बोधिबाट निवर्तन (फर्किने वा पछि फर्केर फर्किने भएको वाला) हुन्छु "यस्तो सोच्छन् ।"

ཐབས་ཙམ་འབའ་ཞིག་བསྟེན་ན་ཡང་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའ་སོ་སོའི་སྐྱེ་བོའི་ས་ལས་མ་འདའ་བས་ཤིན་ཏུ་བཅིངས་པ་ཁོ་ནར་འགྱུར་རོ།། དེ་ལྟ་བས་ན་ཤེས་རབ་དང་བཅས་པའི་ཐབས་བསྟེན་པར་བྱ་སྟེ། འདི་ལྟར་སྔགས་ཀྱིས་ཡོངས་སུ་ཟིན་པའི་དུག་བཞིན་དུ་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའ་རྣམས་ཀྱི་ཉོན་མོངས་པ་ཡང་ཤེས་རབ་ཀྱིས་ཡོངས་སུ་ཟིན་པའི་སྟོབས་ཀྱིས་བསྒོམས་ན་བདུད་རྩིར་འགྱུར་ན། རང་བཞིན་གྱིས་མངོན་པར་མཐོ་བའི་འབྲས་བུ་ཅན་སྦྱིན་པ་ལ་སོགས་པ་གང་ཡིན་པ་ལྟ་སྨོས་ཀྱང་ཅི་དགོས་ཏེ། **འཕགས་པ་དཀོན་མཆོག་བརྩེགས་པ་**ལས་ཇི་སྐད་དུ། "འོད་སྲུངས་འདི་ལྟ་སྟེ། དཔེར་ན་སྔགས་དང་སྨན་གྱིས་ཡོངས་སུ་ཟིན་པའི་དུག་གིས་ནི་འཆི་བར་བྱེད་མི་ནུས་སོ། །དེ་བཞིན་དུ་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའ་རྣམས་ཀྱི་ཉོན་མོངས་པ་ཤེས་རབ་ཀྱིས་ཡོངས་སུ་ཟིན་པས་ཀྱང་ལོག་པར་ལྟུང་བར་བྱེད་མི་ནུས་སོ།" །ཞེས་བཀའ་སྩལ་ཏོ།།

केवल उपाय मात्रको सेवन गर्ना ले पनि बोधिसत्त्व पृथग्जन (साधारण व्यक्ति) को भूमिबाट अतीत नभएको कारण अत्यन्त बाँधी रहन्छन् । यसैले प्रज्ञा सहित उपायको सेवन गर्नु पर्दछ । यसरी मन्त्रबाट परिगृहीत विषले जस्तै बोधिसत्त्वहरूको क्लेश पनि यदि प्रज्ञा द्वारा परिगृहीत भएर भावना गर्नु त्यसको बलमा अमृत हुन जान्छन्, स्वभावबाट अभ्युदय (स्वर्ग) का फल भएको दान आदि (पारमिताहरू) को भन्नु नै के ? **आर्यरत्नकूट** नामक सूत्रमा भनिएको छ—"जस्तो कि काश्यप!

जस्तो मन्त्र र औषधिबाट परिगृहीत विष घातक हुन सक्दैन, उसी प्रकार प्रज्ञा बाट परिगृहीत बोधिसत्त्वहरू को क्लेशबाट पनि विपरीत (मार्गमा) पतित हुन सक्दैन् ।

དེ་ལྟ་བས་ན་གང་གི་ཕྱིར་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའ་ཐབས་ཀྱི་སྟོབས་ཀྱིས་འཁོར་བ་མི་འདོར་བ་དེའི་ཕྱིར་མྱ་ངན་ལས་འདས་པར་མི་ལྟུང་ངོ་།། གང་གི་ཕྱིར་ཤེས་རབ་ཀྱི་སྟོབས་ཀྱིས་དམིགས་པ་མཐའ་དག་སྤོང་བ་དེའི་ཕྱིར་འཁོར་བར་མི་ལྟུང་སྟེ། དེ་བས་ན་མི་གནས་པའི་མྱ་ངན་ལས་འདས་པ་སངས་རྒྱས་ཉིད་འཐོབ་བོ། །དེ་བས་ན་**འཕགས་པ་ནམ་མཁའ་མཛོད་**ལས་ཀྱང་། "དེ་ཤེས་རབ་ཀྱི་ཤེས་པས་ནི་ཉོན་མོངས་པ་ཐམས་ཅད་ཡོངས་སུ་འདོར་རོ། །ཐབས་ཀྱི་ཤེས་པས་ནི་སེམས་ཅན་ཐམས་ཅད་ཡོངས་སུ་མི་གཏོང་ངོ་།" ཞེས་བཀའ་སྩལ་ཏོ།།

त्यसैले जसबाट बोधिसत्त्व उपायको बलले संसारको परित्याग गर्दैनन् त्यसले (श्रावक) निर्वाण पनि पतित हुँदैन् । जुन कारणले प्रज्ञाको बलले समस्त आलम्बनहरूको प्रहाण गर्दछ, त्यही कारण संसारमा खस्दैन । यसैले उसलाई अप्रतिष्ठित निर्वाण बुद्धत्व को प्राप्ति हुन्छन् । यसैले **आर्यगगनगञ्ज** (नामक सूत्र) मा पनि भनिएको छ—"त्यस प्रज्ञारूपी ज्ञानबाट सबै क्लेशहरू को परित्याग हुन्छन्, र उपायज्ञानले सबै प्राणिहरूको परित्याग हुँदैन ।

འཕགས་པ་དགོངས་པ་ངེས་པར་འགྲེལ་པ་ལས་ཀྱང་།

"སེམས་ཅན་གྱི་དོན་ལ་ཤིན་ཏུ་མི་ཕྱོགས་པ་དང་། འདུ་བྱེད་མངོན་པར་འདུ་བྱ་བ་ཐམས་ཅད་ལ་ཤིན་ཏུ་མི་ཕྱོགས་པ་ནི་བླ་ན་མེད་པ་ཡང་དག་པར་རྫོགས་པའི་བྱང་ཆུབ་ཏུ་ངས་མ་བསྟན་ཏོ།" །ཞེས་བཀའ་སྩལ་

ཏོ།། དེ་ལྟ་བས་ན་སངས་རྒྱས་ཉིད་ཐོབ་པར་འདོད་པས་ཤེས་རབ་དང་ཐབས་གཉིས་ཀ་བསྟེན་པར་བྱའོ།།

आर्यसन्धिनिर्मोचन (नाम महायानसूत्र) मा पनि भनिएको छ—"पूर्ण रूपले सत्त्वार्थ (प्राणीहित) बाट विमुख भएका, र पूर्ण रूपले संस्कारको अभिसंस्कारबाट विमुख भएकाहरूको लागि मैले बुद्धले अनुत्तरसम्यक्संबोधिको देशना दिएको होइन ।" यसैले बुद्धत्व प्राप्त गर्ने इच्छुक का उपाय तथा प्रज्ञा दुबैको सेवन गर्नु पर्दछ ।

དེ་ལ་འཇིག་རྟེན་ལས་འདས་པའི་ཤེས་རབ་བསྒོམ་པའི་གནས་སྐབས་སམ། ཤིན་ཏུ་མཉམ་པར་གཞག་པའི་གནས་སྐབས་ན་སྦྱིན་པ་ལ་སོགས་པ་ཐབས་ལ་བསྟེན་པ་མི་འབྱུང་དུ་ཟིན་ཀྱང་། དེ་ལ་སྦྱོར་བ་དང་དེའི་རྗེས་ལས་བྱུང་བའི་ཤེས་རབ་གང་ཡང་བྱུང་བ་དེའི་ཚེ་ཐབས་ལ་བསྟེན་པ་འབྱུང་བ་ཉིད་དེ། དེའི་ཕྱིར་ཤེས་རབ་དང་ཐབས་གཉིས་ཅིག་ཅར་འཇུག་གོ །གཞན་ཡང་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའ་རྣམས་ཀྱི་ཤེས་རབ་དང་ཐབས་ཟུང་དུ་འབྲེལ་བར་འཇུག་པའི་ལམ་ནི་འདི་ཡིན་ཏེ། སེམས་ཅན་ཐམས་ཅད་ལ་ལྟ་བའི་སྙིང་རྗེ་ཆེན་པོས་ཡོངས་སུ་ཟིན་པས་འཇིག་རྟེན་ལས་འདས་པའི་ལམ་བསྟེན་པ་དང་། ལངས་པའི་ཐབས་ཀྱི་དུས་ན་ཡང་སྒྱུ་མ་མཁན་བཞིན་དུ་ཕྱིན་ཅི་མ་ལོག་པ་ཁོ་ནའི་སྦྱིན་པ་ལ་སོགས་པ་ལ་བསྟེན་པ་སྟེ། **འཕགས་པ་བློ་གྲོས་མི་ཟད་པས་བསྟན་པ**་ལས་ཇི་སྐད་དུ། "དེ་ལ་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའི་ཐབས་ནི་གང་། ཤེས་རབ་མངོན་པར་སྒྲུབ་པ་ནི་གང་ཞེ་ན། གང་གི་ཕྱིར་མཉམ་པར་བཞག་པ་ན་སེམས་ཅན་ལ་ལྟ་བས་ན་སྙིང་རྗེ་ཆེན་པོའི་དམིགས་པ་ལ་

སེམས་ཉེ་བར་འཇོག་པ་དེ་ནི་དེའི་**ཐབས**་སོ། །གང་གི་ཕྱིར་ཞི་བ་དང་རབ་ཏུ་ཞི་བར་སྙོམས་པར་འཇུག་པ་དེ་ནི་དེའི་**ཤེས་རབ**་བོ།" །ཞེས་རྒྱ་ཆེར་བཀའ་སྩལ་པ་ལྟ་བུའོ།།

त्यहाँ लोकोत्तर प्रज्ञाको भावना गर्दाखेरी वा अत्यन्त समाहित भएको अवस्थामा दान आदि उपायहरूको सेवन संभव न भएता पनि, उसको प्रयोग तथा पृष्ठलब्ध अवस्थामा (त्यसको पछि उत्पन्न) हुने जुन पनि प्रज्ञा हुन्छन त्यस समय त्यो उपायको सेवनले हुन्छन् । यसैले प्रज्ञा र उपाय दुवै युगनद्ध प्रवृत्त हुन्छन् । र फेरि बोधिसत्त्वहरूको प्रज्ञा र उपाय बाट युगल मार्ग यही हुन । सबै प्राणिहरूलाई देख्ने महाकरुणाले परिगृहीत भएको कारणले लोकोत्तर मार्गको सेवन र उत्थित-उपाय कालमा पनि मायाकारको जस्तै केवल अविपरीत दान आदि को सेवन गर्दछ । जस्तो कि **आर्याक्षयमतिनिर्देशसूत्र** मा भनिएको छ—"त्यहाँ-बोधिसत्त्व को उपाय के हुन् ? प्रज्ञा अभिनिर्हार के हुन् ? जुन कारण समाहित भएर प्राणीहरूलाई देख्नाले महाकरुणाको आलम्बनमा चित्तको उपस्थापन हुन्छन् त्यही उसको उपाय हुन् । जसले शान्ति र प्रशान्ति को समाहित हुन्छन् त्यही उसको (साधक का) प्रज्ञा हुन् ।" यस प्रकार विस्तारै भनिएका छन् ।

བདུད་བཏུལ་བའི་ལེའུ་ལས་ཀྱང་བཀའ་སྩལ་ཏེ། "གཞན་ཡང་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའ་རྣམས་ཀྱི་སྦྱོར་བ་ཡང་དག་ཤུལ་ནི་ཤེས་རབ་ཀྱི་ཤེས་པས་མངོན་པར་བསྒྲུབ་པར་ཡང་བྱེད་ལ། ཐབས་ཀྱི་ཤེས་པས་དགེ་བའི་ཆོས་ཐམས་ཅད་སྡུད་པར་ཡང་སྦྱོར་བ་དང་། ཤེས་རབ་ཀྱི་ཤེས་པས་བདག་མེད་པ་དང་། སེམས་ཅན་མེད་པ་དང་། སྲོག་མེད་པ་དང་། གསོ་བ་མེད་པ་དང་། གང་ཟག་མེད་པར་ཡང་སྦྱོར་

ལ། ཐབས་ཀྱི་ཤེས་པས་སེམས་ཅན་ཐམས་ཅད་ཡོངས་སུ་སྨིན་པར་བྱེད་པ་ཡང་སྦྱོར་བ་གང་ཡིན་པའོ།" །ཞེས་རྒྱ་ཆེར་འབྱུང་ངོ་།།

मारदमन परिच्छेदमा पनि—''अरु पनि बोधिसत्त्वहरूको समुत्कर्ष रूपी प्रयोग प्रज्ञा को ज्ञानबाट प्रयत्न पनि गर्दछन्, उपायज्ञानबाट सबै कुशल धर्महरूको संग्रहमा पनि योग गर्दछन् । प्रज्ञारूपी ज्ञानबाट नैरात्म्य, असत्त्व, अजीव, अपोष र अपुद्गलमा पनि योग गर्दछन् । उपायको ज्ञानबाट सबै प्राणिहरूको परिपाक गर्ने जुन योग छ ।'' यस प्रकार विस्तारै भनिएको छ ।

འཕགས་པ་ཆོས་ཐམས་ཅད་ཡང་དག་པར་བསྡུད་པའི་མདོ་ལས་ཀྱང་།།

དཔེར་ན་སྒྱུ་མའི་མཁན་པོ་ཞིག།
སྤྲུལ་པ་ཐར་བར་བྱ་ཕྱིར་བརྩོན།།
དེས་ནི་སྔ་ནས་དེ་ཤེས་པས།།
སྤྲུལ་པ་དེ་ལ་ཆགས་པ་མེད།།
སྲིད་གསུམ་སྤྲུལ་པ་འདྲ་བར་ནི།།
རྫོགས་པའི་བྱང་ཆུབ་མཁས་པས་ཤེས།།
འགྲོ་བའི་ཆེད་དུ་གོ་བགོས་ཏེ།།
འགྲོ་བ་དེ་ལྟར་སྔར་ནས་ཤེས།། ཞེས་འབྱུང་ངོ་།།

བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའ་རྣམས་ཀྱི་ཤེས་རབ་དང་། ཐབས་ཀྱི་ཚུལ་ཁོ་ན་སྒྲུབ་པའི་དབང་དུ་མཛད་ནས། དེའི་སྦྱོར་བ་འཁོར་བ་ན་གནས་པ་ཡང་ཡིན་པ་ལ། བསམ་པ་མྱ་ངན་ལས་འདས་པ་ལ་གནས་པ་ཡང་ཡིན་ནོ། །ཞེས་བཀའ་སྩལ་ཏོ།།

आर्यधर्मसंगीतिसूत्र मा पनि भनिएको छ—

जस्तो कुनै मायाकार निर्माणलाई मुक्त गर्नको लागि प्रयास गर्दछ, त्यसलाई पहिले देखि त्यो ज्ञात हुन्छन, अतः त्यस निर्माणमा आसक्त हुँदैन । ती नै भवहरूलाई निर्माण जो जस्तै बुझेर सम्बोधिमा पारंगत त्यो जगत् को लागि कवच लगाउछ, किनकि उसले जगत पहिले देखि जानेको हुन्छ ।

बोधिसत्त्वहरूको प्रज्ञा तथा उपायको विधिवत साधनाको अधिन भए पछि उसको प्रयोग संसारमा पनि स्थित छ, र विचार निर्वाणमा पनि स्थित छ यस्तो भनिएको छ ।

དེ་ལྟར་སྟོང་པ་ཉིད་དང་སྙིང་རྗེ་ཆེན་པོའི་སྙིང་པོ་ཅན་བླ་ན་མེད་པ་ཡང་དག་པར་རྫོགས་པའི་བྱང་ཆུབ་ཏུ་ཡོངས་སུ་བསྔོས་པའི་སྦྱིན་པ་ལ་སོགས་པའི་ཐབས་གོམས་པར་བྱས་ལ། དོན་དམ་པའི་བྱང་ཆུབ་ཀྱི་སེམས་བསྐྱེད་པའི་ཕྱིར་སྔ་མ་བཞིན་དུ་རྟག་པར་དུས་དུས་སུ་ཞི་གནས་དང་ལྷག་མཐོང་གི་སྦྱོར་བ་ལ་ཅི་ནུས་སུ་བསྒོམ་པར་བྱ་སྟེ། **འཕགས་པ་སྤྱོད་ཡུལ་ཡོངས་སུ་དག་པའི་མདོ་**ལས། གནས་སྐབས་ཐམས་ཅད་དུ་སེམས་ཅན་གྱི་དོན་བྱེད་པའི་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའ་རྣམས་ཀྱི་ཕན་ཡོན་ཇི་སྐད་དུ་བསྟན་པ་དེ་བཞིན་དུ་ཉེ་བར་གནས་པའི་དྲན་པས་དུས་ཐམས་ཅད་དུ་ཐབས་ལ་མཁས་པ་གོམས་པར་བྱའོ།།

यसरी शून्यता तथा महाकरुणा का हृदय भएका अनुत्तर-सम्यक्संबुद्धमा परिणतदान आदि उपायहरूको अभ्यास गरेर परमार्थ-बोधिचित्त-उत्पाद गर्नको लागि पहिले जस्तो पूर्वक्त विधिबाट सधैं समय समयमा शमथ र विपश्यनाको प्रयोगलाई यथा शक्ति अभ्यास गर्नु पर्दछ । **आर्यगोचर परिशुद्धिसूत्रमा** भनिएको छ—सबै अवस्था मा प्राणिहरूको

अर्थलाई गरेर बोधिसत्त्वहरूको अनुशंसा (गुणहरू) को जस्तै निर्देश गरिएको छ, उसी प्रकार उपस्थित स्मृति द्वारा सधैं उपाय–कौशलको अभ्यास गर्नु पर्दछन् ।

དེ་ལྟར་**སྙིང་རྗེ་**དང་། **ཐབས་**དང་། **བྱང་ཆུབ་ཀྱི་སེམས་**གོམས་པར་བྱས་པ་དེ་ཚེ་འདི་ལ་གདོན་མི་ཟ་བར་ཁྱད་པར་དུ་འགྱུར་ཏེ། དེས་ནི་རྨི་ལམ་ན་རྟག་ཏུ་སངས་རྒྱས་དང་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའ་མཐོང་བར་འགྱུར། རྨི་ལམ་བཟང་པོ་གཞན་དག་ཀྱང་རྨི་བར་འགྱུར། ལྷ་རྣམས་ཀྱང་ཡི་རངས་ནས་སྲུང་བ་བྱེད་པར་འགྱུར། སྐད་ཅིག་རེ་རེ་ལ་ཡང་བསོད་ནམས་དང་ཡེ་ཤེས་ཀྱི་ཚོགས་རྒྱ་ཆེན་པོ་སོགས་པར་འགྱུར། ཉོན་མོངས་པའི་སྒྲིབ་པ་དང་། གནས་ངན་ལེན་ཀྱང་སྦྱང་བར་འགྱུར། དུས་ཐམས་ཅད་དུ་ཡང་བདེ་བ་དང་ཡིད་བདེ་བ་མང་བར་འགྱུར། སྐྱེ་བོ་མང་པོ་ལ་སྡུག་པར་འགྱུར། ལུས་ལ་ཡང་ནད་ཀྱིས་མི་ཐེབས་པར་འགྱུར། སེམས་ལས་སུ་རུང་བ་ཉིད་ཀྱི་མཆོག་ཀྱང་ཐོབ་པར་འགྱུར་ཏེ། དེས་ན་མངོན་པར་ཤེས་པ་ལ་སོགས་པ་ཡོན་ཏན་ཁྱད་པར་ཅན་ཐོབ་བོ།

यसरी करुणा उपाय र बोधिचित्तको अभ्यास गर्ने, त्यो यस जन्ममा निःसंदेह विशिष्ट हुन्छन् । अतः सपना सधैं बुद्ध र बोधिसत्त्वको दर्शन गर्दछन् । अन्य सुन्दर सपना पनि दिखाई दिन्छन् । देवताहरूले पनि अनुमोदनबाट रक्षा गर्दछ । प्रतिक्षणमा पनि पुण्य र ज्ञानसंभारहरूको विपुल (विशाल) संचय हुन सक्लान । उसको क्लेश आवरण तथा दौष्ठुल्यको पनि क्षय हुन्छन् । हरेक समय (सधैं) सुख र सौमनस्य (प्रसन्न मन) अधिक हुन्छन् । धेरैजनहरूको प्रिय हुन्छन् । शरीर पनि रोगग्रस्त हुँदैन । चित्तको परमकर्मण्यता (विनीत) पनि प्राप्त

हुन्छन् । त्यसैले अभिज्ञता (परोक्षज्ञान) आदि विशिष्ट गुणहरूलाई प्राप्त गर्ने छन् ।

དེ་ནས་རྫུ་འཕྲུལ་གྱི་སྟོབས་ཀྱིས་འཇིག་རྟེན་གྱི་ཁམས་མཐའ་ཡས་པ་དག་ཏུ་སོང་ནས་སངས་རྒྱས་བཅོམ་ལྡན་འདས་རྣམས་ལ་མཆོད་པ་བྱེད་དོ། །དེ་དག་ལ་ཆོས་ཀྱང་ཉན་ཏོ། །འཆི་བའི་དུས་ཀྱི་ཆེ་ན་ཡང་གདོན་མི་ཟ་བར་སངས་རྒྱས་དང་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའ་རྣམས་མཐོང་བར་འགྱུར་རོ། །ཚེ་རབས་གཞན་ན་ཡང་སངས་རྒྱས་དང་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའ་དང་མི་འབྲལ་བའི་ཡུལ་དང་། ཁྱད་པར་དུ་འཕགས་པའི་ཁྱིམ་དུ་ཡང་སྐྱེ་བར་འགྱུར་ཏེ། དེས་ན་འབད་མི་དགོས་པར་བསོད་ནམས་དང་ཡེ་ཤེས་ཀྱི་ཚོགས་ཡོངས་སུ་རྫོགས་པར་བྱེད་དོ།། ལོངས་སྤྱོད་ཆེ་བ་དང་། གཡོག་འཁོར་མང་བར་འགྱུར་རོ།། ཤེས་རབ་རྣོ་བས་སྐྱེ་བོ་མང་པོ་ཡོངས་སུ་སྨིན་པར་ཡང་བྱེད་པར་འགྱུར་རོ།། ཚེ་རབས་ཐམས་ཅད་དུ་ཚེ་རབས་དྲན་པར་འགྱུར་ཏེ། དེ་ལྟ་ར་ཕན་ཡོན་ཚད་མེད་པ་མདོ་གཞན་དག་ལས་འབྱུང་བ་ཁོང་དུ་ཆུད་པར་བྱའོ།།

यस पछि (साधक) ऋद्धिको बलबाट अनन्त लोकधातुहरूमा गएर भगवान् बुद्धहरूको पूजा गर्दछन । उनीबाट धर्मको पनि श्रवण गर्दछन् । मृत्युको समयमा पनि निःसंदेह बुद्ध र बोधिसत्त्वहरूको दर्शन हुन्छन् । जन्मान्तर मा पनि बुद्ध तथा बोधिसत्त्वहरूबाट अनपगत क्षेत्रहरू र विशिष्ट घरमा पैदा हुन्छन् । यसैले बिना प्रयत्नको पुण्य र ज्ञानसंभारहरूलाई परिपूर्ण गर्छन् । महाभोग र परिजनहरूको बाहुल्य हुन्छन् । तीक्ष्ण प्रज्ञा द्वारा बहुजनहरूको परिपाक पनि गर्दछ । सबै जन्महरूमा जन्म-जन्म परम्परा को स्मरण गर्दछ । यसरी

अपरिमित (सीमा रहित) अनुशंसा, जुन अन्य सूत्रहरूमा मिल्दछन् तदनुसार जान्नु पर्दछ ।

དེས་དེ་ལྟར་**སྙིང་རྗེ**་དང་། **ཐབས**་དང་། **བྱང་ཆུབ་ཀྱི་སེམས**་རྟག་ཏུ་གུས་པར་ཡུན་རིང་དུ་བསྒོམས་ན་རིམ་གྱིས་སེམས་ཀྱི་རྒྱུད་ཤིན་ཏུ་ཡོངས་སུ་དག་པའི་སྐད་ཅིག་འབྱུང་བས་ཡོངས་སུ་སྨིན་པར་འགྱུར་བའི་ཕྱིར་གཙུབ་ཤིང་གཙུབས་པའི་མེ་བཞིན་དུ་ཡང་དག་པའི་དོན་ལ་བསྒོམ་པ་རབ་ཀྱི་མཐར་ཕྱིན་པར་གྱུར་ནས་འཇིག་རྟེན་ལས་འདས་པའི་ཡེ་ཤེས་རྟོག་པའི་དྲ་བ་མཐའ་དག་དང་བྲལ་བ། ཆོས་ཀྱི་དབྱིངས་སྤྲོས་པ་མེད་པ་ཤིན་ཏུ་གསལ་བར་རྟོགས་པ་དྲི་མ་མེད་ཅིང་མི་གཡོ་ལ་མར་མེ་རླུང་མེད་པར་བཞག་པ་བཞིན་དུ་མི་གཡོ་བ་ཚད་མར་གྱུར་པ། ཆོས་ཐམས་ཅད་བདག་མེད་པའི་ངོ་བོ་དེ་ཁོ་ན་མངོན་དུ་བྱེད་པ་མཐོང་བའི་ལམ་གྱིས་བསྡུས་པ་དོན་དམ་པའི་བྱང་ཆུབ་ཀྱི་སེམས་ཀྱི་ངོ་བོ་ཉིད་འབྱུང་ངོ་།།

करुणा, उपाय तथा बोधिचित्तको संधैं आदरपूर्वक लामो समय सम्म भावना गर्ना ले क्रमशः चित्त सन्ततिमा अति परिशुद्ध क्षणको उत्पाद भए पछि परिपाक भएको कारण अरणि-मन्थन (आगो उत्पन्न गर्ने काठ को घर्षण बाट उत्पन्न) आगोको जस्तै सम्यग् अर्थको भावनाको प्रकर्ष पर्यन्त (उत्कृष्ट) प्राप्त गरेर, लोकोत्तरज्ञान विकल्पको अनेक प्रकारको जालहरू बाट रहित, प्रपञ्च रहित, धर्मधातुको अत्यन्त स्पष्ट अवबोध (ज्ञान) हुन्छ । निर्मल भएर निश्चल, वायु रहित ठाऊँ मा राखिएको दीपक जस्तै निश्चल (बिना-हिली-डुली) प्रमाणभूत सबैं धर्म-नैरात्म्य—स्वभाव भएको तत्त्व साक्षात्कार, दर्शनमार्ग द्वारा संग्रहित, परमार्थ-बोधिचित्तको स्वभाव उत्पन्न हुन्छन् ।

དེ་སྐྱེས་ནས་དངོས་པོའི་མཐའ་ལ་དམིགས་པ་ལ་ཞུགས་པ་ཡིན་ཏེ། དེ་བཞིན་གཤེགས་པའི་རིགས་སུ་སྐྱེས་པ་ཡིན། བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའི་སྐྱོན་མེད་པ་ལ་ཞུགས་པ་ཡིན། འཇིག་རྟེན་གྱི་འགྲོ་བ་ཐམས་ཅད་ལས་ལོག་པ་ཡིན། བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའི་ཆོས་ཉིད་དང་ཆོས་ཀྱི་དབྱིངས་རྟོགས་པ་ལ་གནས་པ་ཡིན། བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའི་ས་དང་པོ་ཐོབ་པ་ཡིན་ནོ་ཞེས་ཕན་ཡོན་དེ་རྒྱས་པར་**ས་བཅུ་པ**་ལ་སོགས་པ་ལས་ཁོང་དུ་ཆུད་པར་བྱའོ། །འདི་ནི་དེ་བཞིན་ཉིད་ལ་དམིགས་པའི་བསམ་གཏན་ཏེ། **འཕགས་པ་ལང་ཀར་གཤེགས་པ**་ལས་བསྟན་ཏེ། འདི་ནི་བྱང་ཆུབ་སེམས་དཔའ་རྣམས་ཀྱི་སྤྲོས་པ་མེད་པ་རྣམ་པར་མི་རྟོག་པ་ཉིད་ལ་འཇུག་པའོ།།

त्यस (परमार्थ बोधिचित्त) को उत्पन्न भए पछि बोधिसत्त्वहरू को अन्तिम आलम्बनमा प्रवृत्ति हुन्छन् । तथागतको गोत्रमा उत्पन्न हुन्छन् । बोधिचित्तको निर्दोष (दोष रहितता) मा प्रवेश हुन्छ । जगत को सबै गतिहरूबाट निवृत्त हुन्छन्, बोधिसत्त्वको धर्मता र धर्मधातु को अवबोधमा स्थित हुन्छन् । बोधिसत्त्वहरूले प्रथमभूमिलाई प्राप्त गर्दछन । यस प्रकार गुणहरूलाई विस्तारै ''दशभूमिक (सूत्र)'' आदि बाट जान्नु पर्दछ । यो तथता मा आलम्बन गराउने ध्यान हुन् किनकि ''**आर्यलङ्कावतार सूत्र**'' मा निर्दिष्ट (भनिएका) छन् । (र) यो बोधिसत्त्वहरूको प्रपञ्च रहित निर्विकल्पतामा प्रवेश हुन्छन् ।

མོས་པས་སྤྱོད་པའི་ས་ལ་ནི་མོས་པའི་དབང་གིས་འཇུག་པར་རྣམ་པར་བཞག་གི །མངོན་པར་འདུ་བྱེད་པས་ནི་མ་ཡིན་ནོ། །ཡེ་ཤེས་དེ་སྐྱེས་པར་གྱུར་ན་ནི་མངོན་དུ་ཞུགས་པ་ཡིན་ཏེ། དེ་ལྟར་ས་དང་

པོར་ཞུགས་པ་དེ་ཕྱིས་བསྒོམ་པའི་ལམ་ལ་འཇིག་རྟེན་ལས་འདས་པ་དང་། དེའི་རྗེས་ལ་ཐོབ་པའི་ཡེ་ཤེས་གཉིས་ཀྱིས་ཤེས་རབ་དང་། ཐབས་བསྒོམས་པས་རིམ་གྱིས་བསྒོམ་པས་སྤང་བར་བྱ་བའི་སྒྲིབ་པ་བསགས་པ་ཕྲ་བ་བས་ཀྱང་ཆེས་ཕྲ་བ་སྦྱང་བའི་ཕྱིར་དང་། ཡོན་ཏན་ཁྱད་པར་ཅན་གོང་མ་གོང་མ་ཐོབ་པའི་ཕྱིར་ས་འོག་མ་རྣམས་ཡོངས་སུ་སྦྱོང་བས་དེ་བཞིན་གཤེགས་པའི་ཡེ་ཤེས་ཀྱི་བར་ལ་ཞུགས་ནས་ཐམས་ཅད་མཁྱེན་པ་ཉིད་ཀྱི་རྒྱ་མཚོར་འཇུག་ཅིང་དགོས་པ་ཡོངས་སུ་འགྲུབ་པའི་དམིགས་པ་ཡང་འཐོབ་སྟེ། འདི་ལྟར་རིམ་པ་ཁོ་ནར་སེམས་ཀྱི་རྒྱུད་ཡོངས་སུ་དག་པར་**འཕགས་པ་ལང་ཀར་གཤེགས་པ་**ལས་ཀྱང་བཀའ་སྩལ་ཏོ།།

अधिमुक्ति भूमिमा अधिमुक्तिवशात् प्रवृत्ति हुने व्यवस्था छ, न कि अभिसंस्कारमा । त्यस ज्ञानको उत्पन्न भएमा साक्षात् प्रवेश हुन्छन् । यस प्रकार प्रथमभूमिमा प्रविष्ट भएर, त्यो पछि भावना मार्गमा लोकोत्तर तथा यसको पृष्ठलब्ध ज्ञान दुवै द्वारा प्रज्ञा तथा उपायको भावनाबाट क्रमशः भावना-प्रहेय संचित आवरण को सूक्ष्मबाट पनि अतिसूक्ष्म को व्यवदान भएमा र उत्तरोत्तर विशिष्टगुणहरूलाई प्राप्त गर्न को लागि अधोभूमिहरूको परिशोधन गर्नाले, तथागतको ज्ञान सम्ममा प्रवेश गरेर सर्वज्ञताको सागरमा प्रविष्ट गरेर कार्य-परिनिष्पत्तिको आलम्बन पनि प्राप्त गर्दछन् । यस प्रकार क्रमशः चित्त-सन्ततिको परिशुद्ध हुनु **आर्यलङ्कावतार** (सूत्र) मा भनिएको छ ।

འཕགས་པ་དགོངས་པ་ངེས་པར་འགྲེལ་པ་ལས་ཀྱང་།

"རིམ་གྱིས་ས་གོང་མ་གོང་མ་རྣམས་སུ་གསེར་ལྟ་བུར་སེམས་རྣམ་པར་སྦྱོང་ལ་བླ་ན་མེད་པ་ཡང་དག་པར་རྫོགས་པའི་བྱང་ཆུབ་ཀྱི་བར་དུ་མངོན་པར་རྫོགས་པར་འཚང་རྒྱའོ།" །ཞེས་གསུངས་སོ།།

आर्यसन्धिनिर्मोचन (नाम महायान सूत्र) मा पनि भनिएको छ—"क्रमबाट उत्तरोत्तर (बोधिसत्त्व) भूमिहरूमा सुवर्ण (सुँन) को जस्तै चित्तलाई विशुद्ध गरेर अनुत्तर सम्यक्संबोधिपर्यन्त (सम्म) अभिसंबुद्ध हुन्छन् ।

ཐམས་ཅད་མཁྱེན་པ་ཉིད་ཀྱི་རྒྱ་མཚོར་ཞུགས་པ་ན་ཡིད་བཞིན་གྱི་ནོར་བུ་ལྟ་བུར་སེམས་ཅན་མཐའ་དག་ཉེ་བར་འཚོ་བའི་ཡོན་ཏན་གྱི་ཕུང་པོ་དང་ནི་ལྡན། སྔོན་གྱི་སྨོན་ལམ་གྱི་འབྲས་བུ་ཡོད་པར་ནི་མཛད། ཐུགས་རྗེ་ཆེན་པོའི་རང་བཞིན་དུ་ནི་འགྱུར། ལྷུན་གྱིས་གྲུབ་པའི་ཐབས་སྣ་ཚོགས་དག་དང་ལྡན། སྤྲུལ་པ་དཔག་ཏུ་མེད་པ་དག་གིས་འགྲོ་བ་མ་ལུས་པའི་དོན་རྣམ་པ་ཐམས་ཅད་ནི་མཛད། ཡོན་ཏན་ཕུན་སུམ་ཚོགས་པ་མ་ལུས་པ་རབ་ཀྱི་མཐར་ཕྱིན་པར་ནི་གྱུར། བག་ཆགས་དང་བཅས་པའི་ཉེས་པའི་དྲི་མ་མཐའ་དག་བསལ་ནས། སེམས་ཅན་གྱི་ཁམས་ཀྱི་མཐས་གཏུགས་པར་བཞུགས་པ་ཡིན་པར་རྟོགས་པ་དང་ལྡན་པས་སངས་རྒྱས་བཅོམ་ལྡན་འདས་ཡོན་ཏན་མཐའ་དག་གི་འབྱུང་གནས་ལ་དད་པ་བསྐྱེད་ལ་ཡོན་ཏན་དེ་ཡོངས་སུ་བསྒྲུབ་པའི་ཕྱིར་བདག་ཉིད་ཐམས་ཅད་ཀྱིས་འབད་པར་བྱའོ།།

सर्वज्ञताको सागरमा प्रवेश भए पछि चिन्तामणि (यस्तो रत्न जसबाट सबै इच्छाहरूलाई पूर्ति गर्दछन्) को जस्तै समग्र प्राणिहरूको उपजीवी गुणवान काय (शरीर) ले युक्त, पूर्व प्रणिधानको सफलीकरण (सफलतापूर्वक), महाकृपा मा शमरसता भएर अनभोगिक रूपबाट हुने नाना उपायहरूबाट युक्त हुन्छन् । अपरिमित निर्मितहरू द्वारा अशेष जगतका सबै प्रकारका अर्थहरू का सम्पादन गर्दछ । अशेष गुण सम्पत्तिहरूको प्रकर्षपर्यन्त मा पुगेका छन्, वासना-सहित समग्र

दोष मलहरूको निराकरण गरेर सत्त्वधातुको अन्तपर्यन्त सम्म विहार गर्ने वाला हुन, यस्तो प्रेक्षवानहरू (ज्ञानी) को द्वारा भगवान् बुद्ध (जुन कि) समग्र गुणहरू को आकार (भण्डार) हुन्, उनके प्रति श्रद्धा उत्पाद गरेर ती गुणहरूलाई (आफुमा) परिपूर्णत: सिद्ध गर्न को लागि सबै प्रकार ले प्रयत्न गर्नु ।

དེ་བས་ན་**བཅོམ་ལྡན་འདས་**ཀྱིས་འདི་སྐད་དུ། "ཐམས་ཅད་མཁྱེན་པའི་ཡེ་ཤེས་དེ་ནི་**སྙིང་རྗེའི་**རྩ་བ་ལས་བྱུང་བ་ཡིན། **བྱང་ཆུབ་ཀྱི་སེམས་**ཀྱི་རྒྱུ་ལས་བྱུང་བ་ཡིན། ཐབས་ཀྱིས་མཐར་ཕྱིན་པ་ཡིན་ནོ།།" ཞེས་བཀའ་སྩལ་ཏོ།།

अत: भगवान् (बुद्ध) ले यसरी भन्नु भएको छ—"यो सर्वज्ञज्ञान करुणाको मूलबाट प्रादुर्भूत, बोधिचित्त हेतुबाट उद्भूत र उपायबाट पर्यवसित छन् ।"

དམ་པ་ཕྲག་དོག་ལ་སོགས་དྲི་མ་ཐག་བསྲིངས་པ།།
ཡོན་ཏན་རྣམས་ཀྱིས་མི་ངོམས་ཆུ་ཡི་མཚོ་འདྲ་དག།
རྣམ་པར་ཕྱེ་ནས་ལེགས་པར་བཤད་རྣམས་འཛིན་བྱེད་དེ།།
ངང་པ་རབ་དགའ་ཆུ་ལས་འོ་མ་ལེན་པ་བཞིན།།

सत्पुरुष (बुद्धिमान) ईर्ष्या (अरू को सफलता लाई देखेर जलनु, डाह गर्नु) आदि मलहरूलाई दूर गरेर, जल (पानी) बाट थोपा-थोपा मिलेर सागर बने को जस्तै गुणहरूले अतृप्त रहन्छन् । (बुद्धिमान पुरुष) विवेक ले (जाँचेर) सुभाषितहरूलाई ग्रहण गर्दछन् । जस्तो कि प्रसन्न भएर हाँस ले पानी बाट दूध (मात्र) लिन्छन् ।। १ ।।

དེ་ལྟ་བས་ན་མཁས་རྣམས་ཀྱིས།།

ཕྱོགས་ལྷུང་དཀྲུགས་ཡིད་རིང་སྤོང་ས་ལ།།

བྱིས་པ་ལས་ཀྱང་ལེགས་བཤད་པ།།

ཐམས་ཅད་བླང་བ་ཁོ་ནར་བྱ།།

यसैले विद्वानहरूलाई पक्षपातबाट व्याकुल मनलाई टाढा गरेर, बालकहरू बाट पनि सबै सुभाषित (वचन) लाई ग्रहण गर्नु पर्दछ ।। २।।

དེ་ལྟར་དབུ་མའི་ལམ་བཤད་པས།།

བདག་གིས་བསོད་ནམས་གང་ཐོབ་པ།།

དེ་ཡིས་སྐྱེ་བོ་མ་ལུས་པ།།

དབུ་མའི་ལམ་ནི་ཐོབ་པར་ཤོག།

यसरी मध्यम मार्गको आख्यान गर्ना ले, मैले जुन पूण्य प्राप्त गरेको छु, त्यस (पुण्य) बाट विशेषजनहरूलाई मध्यम-मार्ग प्राप्त होस् ।। ३ ।।

སྒོམ་པའི་རིམ་པ་ཨཱ་ཙརྻ་ཀམལཤཱིལས་བར་དུ་མཛད་པ་རྫོགས་སོ།། །།

आचार्य कमलशील द्वारा मध्य मा विरचित (द्वितीय) भावनाक्रम समाप्त भयो ।

རྒྱ་གར་གྱི་མཁན་པོ་པྲཛྙཱ་ཝརྨ་དང་། ལོ་ཙཱ་བ་བནྡེ་ཡེ་ཤེས་སྡེས་བསྒྱུར་ཅིང་ཞུས་ཏེ་གཏན་ལ་ཕབ་པའོ།། །།

भारतीय उपाध्याय प्रज्ञावर्म र भोट लोचावा भदन्त ज्ञानसेन द्वारा अनुदित, सम्पादित एवं निरूपित गरिएका हुन् ।

द्वितीय भावनाक्रम को नेपाली भाषानुवाद समाप्त भयो

परिशिष्ट

त्रिरत्न शरण गमन.....དཀོན་མཆོག་གསུམ་ལ་སྐྱབས་སུ་འགྲོ་ཚུལ་ནི།

गुरुं शरणं गच्छामि ।
बुद्धं शरणं गच्छामि ।
धर्म शरणं गच्छामि ।
सघं शरणं गच्छामि ।

བླ་མ་ལ་སྐྱབས་སུ་མཆིའོ།།
སངས་རྒྱས་ལ་སྐྱབས་སུ་མཆིའོ།།
ཆོས་ལ་སྐྱབས་སུ་མཆིའོ།།
དགེ་འདུན་ལ་སྐྱབས་སུ་མཆིའོ།།

नमः शाक्यमुनये तथागतायार्हते सम्यक्सम्बुद्धाय ।

བླ་མ་སྟོན་པ་བཅོམ་ལྡན་འདས་དེ་བཞིན་གཤེགས་པ་དགྲ་བཅོམ་པ་ཡང་དག་པར་རྫོགས་པའི་སངས་རྒྱས་དཔལ་རྒྱལ་བ་ཤཱཀྱ་ཐུབ་པ་ལ་ཕྱག་འཚལ་ལོ། །མཆོད་དོ་སྐྱབས་སུ་མཆིའོ།།

स्वल्पाक्षर प्रज्ञापारमिता में कहा गया धारणी.....ཤེར་ཕྱིན་ཡི་གེ་ཉུང་ངུ་ལས་གསུངས་པའི་གཟུངས་ནི། (ཐུབ་པའི་མཚན་སྔགས། मुनि नाम धारणी)

तद्यथा । ओं मुने-मुने महामुनये स्वाहा ।।

ཏདྱཐཱ། ཨོཾ་མུ་ནེ་མུ་ནེ་མ་ཧཱ་མུ་ན་ཡེ་སྭཱ་ཧཱ།

शताक्षरी ཡིག་བརྒྱ་ནི་.(..རྡོར་སེམས་བཟླས་པ་.वज्रसत्व जप)

ॐ वज्रसत्व समयमनुपालय वज्रसत्वत्वेनोपतिष्ठ दृढो मे भव, सुतोष्यो मे भव, सुपोष्यो मे भव, अनुरक्तों में भव, सर्वसिद्धिं मे प्रयच्छ

सर्वकर्मसु च मे चित्तं श्रेयः कुरु हुँ ह ह ह ह हो भगवन् सर्वतथागत वज्र मा मे मुञ्चवज्री भव महासमय सत्व आः ।।

ཨོཾ་བཛྲ་ས་ཏྭ་ས་མ་ཡ། མ་ནུ་པཱ་ལ་ཡ། བཛྲསཏྭ་ཏེ་ནོ་པ། ཏིཥྛ་དྲྀ་ཌྷོ་མེ་བྷ་ཝ། སུ་ཏོ་ཥྱོ་མེ་བྷ་ཝ། སུཔོཥྱོ་མེ་བྷཝ། ཨ་ནུ་རཀྟོ་མེ་བྷ་ཝ། སརྦ་སིདྡྷི་མེ་པྲ་ཡ་ཙྪ། ས་རྦ་ཀརྨ་སུ་ཙ་མེ་ཙི་ཏྟཾ་ཤྲེཡཿ ཀུ་རུ་ཧཱུཾ་ཧ་ཧ་ཧ་ཧ་ཧོཿ བྷ་ག་ཝན་སརྦ་ཏ་ཐཱ་ག་ཏ་བ་ཛྲ་མཱ་མེ་མུཉྩ་བཛྲཱི་བྷ་ཝ་མ་ཧཱ་ས་མ་ཡ་ས་ཏྭ་ཨཱཿ

ॐ वज्रसत्त्व हुँ आः ।।
ཨོཾ་བཛྲ་ས་ཏྭ་ཧཱུཾ་ཨཱཿ

अपरमिता-आयु-धारणी ...ཚེ་གཟུངས་ནི།

ॐ नमो भगवते अपरमितायु ज्ञानसुविनिश्चित तेजोराजाय तथागतायाऽर्हते सम्यकसंबुद्धाय तद्यथा । ओं पुण्ये पुण्ये महा पुण्ये अपरमित पुण्ये अपरमित पुण्ये ज्ञानसंभारोपचिते ओं सर्व संस्कार परिशुद्धे धर्मते गगन समुद्‌गते स्वभाव विशुद्धे महानय परिवारे स्वाहा ।।

ཨོཾ་ན་མོ་བྷ་ག་ཝ་ཏེ། ཨ་པ་རི་མི་ཏ་ཨ་ཡུ་རྫྙཱ་ན་སུ་བི་ནི་ཤྩི་ཏ་ཏེ་ཛོ་རཱ་ཛཱ་ཡ། ཏ་ཐཱ་ག་ཏ་ཡ། ཨརྷ་ཏེ་ས་མྱཀྶཾ་བུདྡྷཱ་ཡ། ཏ་དྱ་ཐཱ། ཨོཾ་པུཎྱེ་པུཎྱེ། མ་ཧཱ་པུཎྱེ། ཨ་པ་རི་མི་ཏ་པུཎྱེ། ཨ་པ་རི་མི་ཏ་པུཎྱ་ཛྙཱ་ན་སཾབྷཱ་རོ་པ་ཙི་ཏེ། ཨོཾ་སརྦ་སཾསྐཱ་ར་པ་རི་ཤུདྡྷ་དྷརྨ་ཏེ་ག་ག་ན་ས་མུ་དྒ་ཏེ་སྭ་བྷཱ་ཝ་བི་ཤུདྡྷེ་མ་ཧཱ་ན་ཡ་པ་རི་ཝཱ་རེ་སྭཱ་ཧཱ།

मञ्जुश्री धारणी..........འཇམ་དབྱངས་ཀྱི་གཟུངས།

ॐ अ र प च न धीः ।
ཨོཾ་ཨ་ར་པ་ཙ་ན་དྷཱིཿ

आर्यावलोकितेश्वर के षडक्षरी..........ཡི་གེ་དྲུག་མ་ནི།

ॐ मणिपद्मे हूँ ।।
ཨོཾ་མ་ཎི་པདྨེ་ཧཱུྃ།།

आर्यतारा के मूल धारणी........རྗེ་བཙུན་འཕགས་མ་སྒྲོལ་མའི་རྩ་སྔགས་ནི།།

ॐ तारे तुत्तारे तुरे स्वाहा ।।
ཨོཾ་ཏཱ་རེ་ཏུ་ཏྟཱ་རེ་ཏུ་རེ་སྭཱ་ཧཱ།།

गुरुपद्मसम्भव नामधारणी............གུ་རུའི་མཚན་སྔགས་ནི།

ॐ आ: हुँ वज्रगुरुपद्मसिद्धि हुँ
ཨོཾ་ཨཱཿ་ཧཱུྃ་བཛྲ་གུ་རུ་པདྨ་སིདྡྷི་ཧཱུྃཿ

प्रज्ञापारमिता धारणी........ཤེས་རབ་ཀྱི་ཕ་རོལ་ཏུ་ཕྱིན་པའི་སྔགས།

तद्यथा ओं गते-गते पारगते, पारसंगते बोधि स्वाहा ।
ཏདྱཐཱ། ཨོཾ་ག་ཏེ་ག་ཏེ་པཱ་ར་ག་ཏེ་པཱ་ར་སཾ་ག་ཏེ་བོ་དྷི་སྭཱ་ཧཱ།།

वज्रविदारण धारणी.......རྡོ་རྗེ་རྣམ་པར་འཇོམས་པའི་གཟུངས་ནི།

नमश्चन्द्र वज्रक्रोध ह्यग्रीव हुलु हुलु तिष्ठ तिष्ठ भन्द भन्द हन हन
अमृते हुँफट् स्वाहा ।।
ནམ་ཙནྡྲ་བཛྲ་ཀྲོ་དྷ་ཡ། ཧུ་ལུ་ཧུ་ལུ། ཏིཥྛ་ཏིཥྛ།
བནྡྷ་བནྡྷ། ཧ་ན་ཧ་ན། ཨ་མྲི་ཏེ་ཧཱུྃ་ཕཊ། སྭཱ་ཧཱ།

बुद्धवचनः

ये धर्मा हेतुप्रभवा हेतुं तेषां तथागतो ह्यवदत् ।
तेषां च यो निरोध एवं वादी महाश्रमणः ।।

ཆོས་རྣམས་ཐམས་ཅད་རྒྱུ་ལས་བྱུང་།།
དེ་རྒྱུ་དེ་བཞིན་གཤེགས་པས་གསུངས།།
དེ་ལ་འགོག་པ་གང་ཡིན་པ།།
དགེ་སྦྱོང་ཆེན་པོས་དེ་སྐད་གསུངས།།

जितने धर्म हेतु से उत्पन्न (=हेतु मूलक) हैं,
उन हेतुओं को तथागत ने कहा, (और)
उन हेतुओं के निरोध को भी
महाश्रवण ने कहा है ।

All (Contaminated) Phenomena arise from causes,
Which were described by the Tathāgata,
That which leads to their cessation,
Was also explained by the Paragan of Virtue.

बुद्धवचनः

सर्वपापस्याकरणं कुशलस्योपसम्पदा ।
स्वचित्तपर्यवदापनं एतद् बुद्धानां शासनम् ।।

སྡིག་པ་ཅི་ཡང་མི་བྱ་ཞིང་།
དགེ་བ་ཕུན་སུམ་ཚོགས་པར་བྱ།
རང་གི་སེམས་ནི་ཡོངས་སུ་འདུལ།
འདི་ནི་སངས་རྒྱས་བསྟན་པ་ཡིན།

सभी पापों को न करना,
पुण्यों का संचय करना,
अपने चित्त को परिशुद्ध करना
यही बुद्धों का शासन (=शिक्षा) है ।

Commit not one unwhole some deed,
But gather a wealth of virtue,
Subdue your mind in its entirety,
This is the teaching of Buddha.

